अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र

सर्वोदय जगत

वर्ष-38, अंक-8, 1-15 दिसवबर, 2014

सर्व सेवा संघ का उद्भव एवं आरोहण

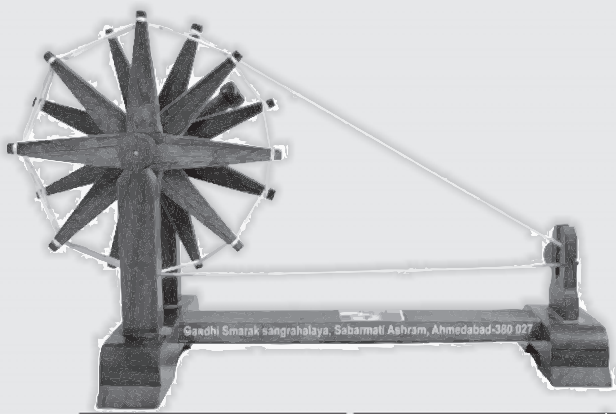

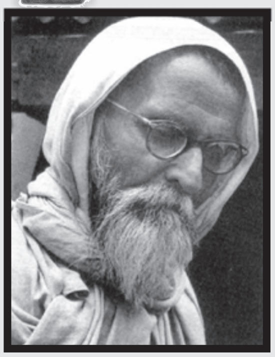

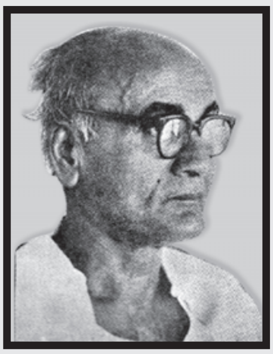

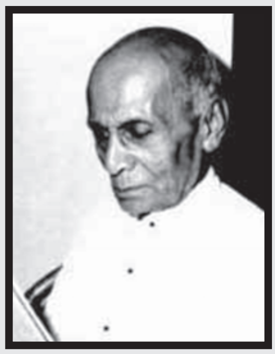

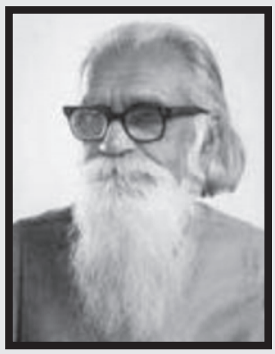

सर्व सेवा संघ आज जैसा है, वैसा जरूर होना चाहिए,
और वह हजार साल तक टिकना चाहिए।
- विनोबा

सर्व सेवा संघ
(अखिल भारत सर्वोदय मंडल)
द्वारा प्रकाशित

अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र
सर्वोदय जगत
सत्य-अहिंसा एवं सर्वोदय-सम्पूर्ण क्रांति का संदेश वाहक
वर्ष : 38, अंक : 08, 1-15 दिसम्बर, 2014

संपादक — **बिमल कुमार**, मो. : 9235772595
कार्यकारी संपादक — **अशोक मोती**, मो. : 7488387174

संपादक मंडल
डॉ. रामजी सिंह, भवानी शंकर 'कुसुम'
बिमल कुमार, अशोक मोती

संपादकीय कार्यालय
सर्व सेवा संघ, साधना केन्द्र
राजघाट, वाराणसी-221001 (उ.प्र.)
फोन : 0542-2440-385/223
ईमेल : sarvodayajagat@gmail.com
Website : sssprakashan.com

शुल्क

मूल्य	:	पांच रुपये
वार्षिक	:	100 रुपये
आजीवन	:	1000 रुपये

खाता संख्या : 383502010004310
IFSC No. UBIN-0538353

विज्ञापन दर

पूरा पृष्ठ	:	2000 रुपये
आधा पृष्ठ	:	1000 रुपये
चौथाई पृष्ठ	:	500 रुपये

इस अंक में...

1. गांधीजी के तीन बंदर... 2
2. संपादकीय.... 3
3. सर्व सेवा संघ का उद्भव एवं... 4
4. चरखा संघ का सर्व सेवा संघ में... 8
5. अखिल भारत सर्व सेवा संघ का... 9
6. सबकी भलाई का काम सर्वोदय... 11
7. कांग्रेस-गांधी जनता और क्रांति... 12
8. सर्वोदय की दृष्टि... 15
9. सर्वोदय की नींव... 16
10. गतिविधियां एवं समाचार... 18
11. सवर्ण के हाथ में झाड़ू और अूछत... 19
12. तीन कविताएं... 20

'सर्वोदय जगत' में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। उनके साथ सर्व सेवा संघ या संपादक मंडल का सहमत होना जरूरी नहीं है।

गांधीजी के तीन बंदर

❑ काकासाहेब कालेलकर

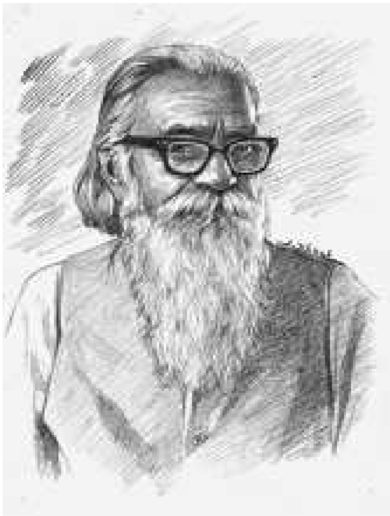

बापूजी के आसपास जो कागज बिखरे पड़े रहते हैं, वे शरारती पवन के झोंकों से उड़ न जाएं, इसलिए उनपर कुछ प्राकृतिक टेढ़े-मेढ़े; पर आकर्षक पत्थर रखे जाते हैं। आजकल इनके बीच चीनी मिट्टी का शिशु-प्रेम से भरकर यह खिलौना बापूजी को भेंट किया होगा और बापूजी ने उसका दिल रखने के लिए उसे अपनी किताबों की अलमारी पर रख दिया होगा।

किन्तु बापूजी बोले, ''ऐसा नहीं है। इसे तो मैंने स्वयं को जागृत रखने के लिए अपनी नजर के सामने रखा है। 'कुछ बुरा मत देखो, बुरा मत सुनो और बुरा मत बोलो' इस बोध को हमेशा याद रखने के लिए ही मैंने इसे यहां रखा है। दो दिन के सफर में जाता हूं, तब भी इसे अपने साथ लेकर जाता हूं और वे मुझे वह अमूल्य सन्देश देते रहते हैं।''

जब कभी मैं बापूजी से मिलने जाता हूं, तब मैं भी चीनी मिट्टी के उन तीन धवल बंदरों को देखता हूं, लेकिन मुझे यह स्मरण नहीं कि उन्होंने मुझे ऐसा बोध दिया हो। मेरे लिए वे मामूली खिलौने के बंदर थे। वे तो महात्मा के साथ ही संवाद करेंगे न! मुझे देखकर एक बंदर

> **1 दिसंबर : काका कालेलकर-जयंती**
> **संस्कृति के परिव्राजक एवं समन्वय के साधक काका साहेब को उनकी जयंती पर विनम्र श्रद्धांजलि व कोटिशः नमन!**

बना तीन बंदरों का एक खिलौना भी विराजमान हुआ है। वह इतना छोटा है कि खास किसी का ध्यानाकर्षण नहीं करता। उसमें कोई ऐसी विशेष कला भी नहीं, जो कुछ चमत्कृत कर सके। तीन बंदरों का खिलौना कई जगहों पर देखने को मिलता है। एक बंदर अपने हाथों से अपनी आँखें बंद किये होता है, दूसरा अपने हाथ अपने कानों पर रखे होता है और तीसरा अपने हाथों से अपने होंठ दबाकर अपना मुँह बंद किये होता है। इस खिलौने और इसके प्रख्यात बोध से सभी परिचित हैं।

मुझे लगा कि किसी बच्चे ने अपने

को लगा होगा कि इस पामर को देखने से क्या फायदा? और उसने अपनी आँखें बंद कर ली होंगी। दूसरे ने संकल्प किया होगा कि इस बेवकूफ की बकवास नहीं सुनना है और तीसरे बंदर ने अपने सयानेपन से निश्चय किया होगा कि इस प्रमादी को उपदेश देना व्यर्थ है।

पूज्य बापू ने यदि मेरे प्रति ऐसी ही वृत्ति रखी होती तो मैं कहाँ जाता? मैं तो कभी भी उन्हें मिलने चला जाता हूं। वे मेरी बातें धीरज से सुनते हैं ओर एक ही बात को अनेक तरीकों से मुझे समझाते थकते नहीं हैं। बापूजी तो बंदरों से बोध लेते भी हैं और सुपरमैन की तरह उस पर अमल भी करते हैं। ❑

संपादकीय

सर्वोदय आंदोलन की अपरिहार्यता

भारत जब ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन से मुक्त हुआ, तब भारत के नव-निर्माण के लिए दो धाराएं प्रमुख रूप से सामने थीं। एक वह थी, जो लोक-कल्याणकारी राज्य के माध्यम से नव-निर्माण करना चाहती थी। इस विचारधारा को मानने वालों ने इसी कारण राजसत्ता में जाने का निर्णय लिया तथा गांधीजी की इस सलाह को नकार दिया कि कांग्रेस को भंग कर लोकसेवकों की जमात में परिवर्तित कर दिया जाये। राजसत्ता का महत्त्व दो अन्य कारणों से भी रेखांकित किया गया। एक तो यह कि अंग्रेज जिस भारत को छोड़ कर जा रहे थे, उसके एकीकरण की एक बड़ी समस्या थी, और नये बने पाकिस्तान द्वारा इसमें अनेक अड़चनें डाली जा रही थीं। दूसरी यह कि भारत की आजादी की लड़ाई उपनिवेशवाद एवं वैश्विक पूंजीवाद के विरुद्ध भी थी। वैश्विक पूंजीवाद एवं नव उपनिवेशवाद अपना जाल भारत में न फैला सके, इसके लिए भी एक संकल्पयुक्त राजसत्ता की जरूरत थी। तत्कालीन कांग्रेस नेतृत्व ने यह विचार स्वीकार किया था कि इन चुनौतियों का सामना करने के अलावा राजसत्ता की भूमिका लोक-मुखी एवं लोक-हितकारी होगी। यह अलग बात है कि इस संकल्प का अन्तर्विरोध उस तंत्र के साथ था, जिस तंत्र के माध्यम से इसे लागू किया जाना था। इसी कारण कालांतर में राजसत्ता लोक-विरोधी भी हो गयी तथा वैश्विक पूंजीवादी बाजार तथा नव उपनिवेशवादी ताकतों की सहचरी भी हो गयी।

दूसरी विचारधारा वह थी, जो अहिंसक समाज का निर्माण करने को कृतसंकल्प थी। अहिंसक समाज का निर्माण किसी केन्द्रमुखी श्रेणीबद्ध संगठन के माध्यम से सम्भव नहीं था। दूसरा, अहिंसक समाज का निर्माण लोक के द्वारा ही सम्भव था, अर्थात् लोकशक्ति का निर्माण तथा लोकसत्ता का निर्माण इसके लिए अपरिहार्य था। तीसरा, लोक के अभिक्रम का प्रकटीकरण सत्याग्रह एवं वैकल्पिक रचना के माध्यम से ही सम्भव था, तथा चौथा; लोकसत्ता का अधिष्ठान ग्राम स्तर पर ही सम्भव था। अतः ग्राम-स्वराज्य ही इसका माध्यम हो सकता है।

इन चार सूत्रों के इर्द-गिर्द जिस आंदोलन का निर्माण हुआ, उसे विश्व सर्वोदय आंदोलन के नाम से जानने लगा। सर्व सेवा संघ एवं सर्वोदय समाज इसी आंदोलन के वाहक बने। ग्राम स्वराज्य के निर्माण का प्रस्थान बिन्दु भू-दान आंदोलन बना, तो राजसत्ता जब लोक-विरोधी स्वरूप लेने लगी तो लोकशक्ति व लोकसत्ता के प्रकटीकरण का माध्यम संपूर्ण क्रांति आंदोलन बना। इस बीच हृदय परिवर्तन के तथा स्थानीय स्तर पर राष्ट्र-निर्माण के अनेकानेक कार्यक्रम सर्वोदय विचार को मानने वालों द्वारा चलाये गये। सन् 1990 के बाद पूंजीवादी बाजार के वैश्वीकरण के खिलाफ तथा जल-जंगल-जमीन व खनिज के दोहन के खिलाफ भी आंदोलन जारी हैं।

सर्वोदय विचार जिस निर्माण के प्रति कटिबद्ध था तथा राजसत्ता जिस निर्माण के प्रति कटिबद्ध रही, उनके बीच का टकराव केवल विचारधारा का टकराव नहीं था। यह दो सभ्यताओं के बीच का भी टकराव था।

सर्वोदय का बुनियादी विचार यह था कि मनुष्य के समाजों का निर्माण एवं सभ्यता का विकास मनुष्य के श्रम, परस्पर सहयोग तथा प्रकृति के साथ उसके संबंध के कारण हुआ है। सामूहिक श्रम एवं प्रकृति के सहजीवी संबंधों के कारण मनुष्य की सभ्यता का विकास होता चला गया। श्रम एवं प्रकृति के उपादानों के संयुक्त प्रभाव से जहां समुदाय का निर्माण होता गया, उन्हें ही हम गांव के नाम से जानते हैं। इसी कारण श्रम की प्रतिष्ठा एवं प्रकृति की प्रतिष्ठा दोनों इसमें निहित थे। किसी भी एक का दोहन या शोषण इस सभ्यता के मूल्यों के खिलाफ था।

दूसरी ओर नगर—श्रम के तथा प्रकृति के—दोनों के शोषण व दोहन पर आधारित थे। नगरीय समाज को बनाये रखने के लिए श्रम तथा संसाधन दोनों को हिंसा बल द्वारा, सम्पत्ति या वस्तु के रूप में अपने अधिकार में लेना था। दास-प्रथा से लेकर श्रम के पूंजीवादी शोषण तक यही प्रक्रिया थी। यह प्रक्रिया हिंसा आधारित एवं शोषण-दोहन आधारित थी। पूंजीवादी बाजार ने इस हिंसा को तथा इस शोषण-दोहन को एक संस्था का रूप दे दिया, एक स्वीकार्य-व्यवस्था का रूप दे दिया।

ऐसे में अहिंसक समाज के निर्माण का कार्य कठिन तो हो गया, लेकिन स्पष्ट भी हो गया है। अहिंसक समाज का अधिष्ठान ग्राम स्वराज्य ही हो सकता है, यह पहले से कहीं ज्यादा स्पष्ट हो गया है। श्रम का शोषण एवं प्रकृति का शोषण-दोहन एक ही प्रक्रिया के अंग हैं। अतः संघर्ष की रणनीति यही हो सकती है कि श्रम व प्रकृति के शोषण-दोहन के खिलाफ एक ही कार्यनीति बनायी जाये। इस संघर्ष का माध्यम सत्याग्रह एवं वैकल्पिक रचना हो, तथा इस संघर्ष का सामाजिक आधार जल-जंगल-जमीन व खनिज से जुड़े परम्परागत समुदाय हों। सर्वोदय आंदोलन यही कार्य करता रहा है। इसे और भी धार देने की जरूरत है।

बिमल कुमार

सर्व-सेवा-संघ का उद्‌भव एवं विकास

सर्वोदय-समाज का 5वां वार्षिक सम्मेलन
चांडिल (मानभूम, बिहार) : 7-8-9 मार्च, 1953

7 मार्च, 1953 को मौनपूर्वक सामूहिक कताई का कार्यक्रम हुआ, जिसमें *राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद* तथा बिहार के राज्यपाल आर. आर. दिवाकर शामिल हुए।

शंकरावदेव ने सर्वोदय समाज के सेवकों की तरफ से *अखिल भारत चरखा-संघ* के अध्यक्ष *श्री धीरेन्द्र मजूमदार* को इस सम्मेलन की अध्यक्षता करने का अनुरोध किया।

लक्ष्मीबाबू

धीरेन्द्रभाई, बहनो और भाइयो, हर एक सम्मेलन में यह एक औपचारिक विधि होती है कि जो लोग आये हुए हों, उनका स्वागत किया जाय। लेकिन यहां सर्वोदय-समाज-सम्मेलन में कौन किसका स्वागत करे, यह सवाल होता है। सर्वोदय-समाज के मूल में कल्पना यह है कि हम सब एक ही परिवार के हैं। पारिवारिक भावना का औपचारिक विधि से कोई मेल नहीं है। परिवार का कौन व्यक्ति किसका स्वागत करे? जो कुछ बन पड़ा है, वह ईश्वर की कृपा से हुआ है। जो दोष रह गये हैं, वे हमारे हैं। ये त्रुटियां हमारे मोह, दोष और एकता के अभाव के परिणाम हैं। मैं तो नम्रतापूर्वक तुलसीदासजी के शब्दों में इतना ही कहूंगा, 'गुन तुम्हार समुझौ निज दोसा।' मैं आपकी मार्फत भगवान् की क्षमा-याचना करता हूं।

धीरेन्द्र मजूमदार (अध्यक्ष)

साथियो, *हम सब सर्वोदय-समाज के सेवक अपने कर्तव्य का निर्णय करने के लिए यहां इकट्ठा हुए हैं। आज सर्वोदय-परिवार के सामने दो प्रश्न है : एक,* भारतीय मानव की आशा और *दूसरा,* कालपुरुष का आह्वान। या तो ये चीजें हमें ऊपर उठा देंगी या मिटा देंगी। या तो हम उनका आलिंगन करके ऊपर उठ जायेंगे या फिर वे हमको ग्रास कर खतम कर देंगी। बीच का रास्ता नहीं है। इसे हम समझ लें और अपनी भूमिका की दृष्टि से युग-समस्या का विचार करें। *फुटकर बातों को सोचने से काम नहीं चलेगा। युग-समस्या के समाधान की बात मुख्य है। उस मूल प्रश्न में हाथ डालें। उसके बारे में चर्चा करके आप निर्णय करें और अपनी-अपनी जगह जाकर अपनी आहुति चढ़ा दें।* तभी हमारे अस्तित्व का कुछ मतलब रहेगा, अन्यथा कालपुरुष हमको ग्रास कर जायेगा। आशा है कि हम सब इस बात को समझ कर तत्त्वनिर्णय करेंगे। ईश्वर हमको अपनी जिम्मेवारी समझने की सामर्थ्य दें।

राजेन्द्रबाबू

पूज्य विनोबाजी, धीरेन्भाई, बहनो और भाइयो, मैं यहां ज्यादा सुनने और देखने के लिए आया था, कहने के लिए नहीं। क्योंकि

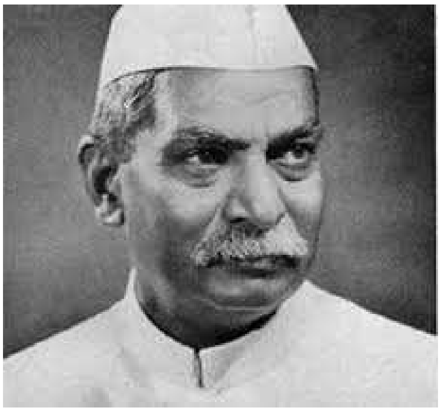

डॉ. राजेन्द्र बाबू की जयंती (3 दिसंबर) पर उन्हें
श्रद्धांजलि एवं कोटिशः नमन

मेरे दिल में इस बात का संदेह है कि यहां मुझे कुछ बोलने-कहने का अधिकार है या नहीं। वह इस वजह से कि जिस यज्ञ में आप पड़े हुए हैं, जिसका व्रत आपने लिया है, उसमें मेरा कोई हिस्सा नहीं है। कम-से-कम सार्वजनिक रूप में मैंने इसमें कोई भाग नहीं लिया है तो, ऐसी अवस्था में यदि मैं आपसे कुछ बातें कहूं, तो उन बातों में कोई असर नहीं रहेगा, क्योंकि उनके पीछे कोई ऐसा कार्य नहीं है, जो उन्हें शक्ति दे सके। इसलिए मैं आपके सामने ज्यादा कुछ कहना नहीं चाहता।

कठिनाई में ही पुरुषार्थ : इतना ही कहना चाहता हूं कि आपने जो काम आरम्भ किया है, वह एक बहुत बड़ा काम है। जो काम जितना बड़ा होता है, उसमें कठिनाइयां भी उतनी ही बड़ी होती हैं। मगर बड़ी कठिनाइयों को पार करके उन पर विजय प्राप्त करना ही पुरुषार्थ है। जितनी अधिक कठिनाइयां होंगी, उतना ही अधिक बल लगा करके शक्ति उपार्जित करनी चाहिए। जितना आप जीतेंगे, उतना ही पुरुषार्थ का अधिक प्रदर्शन होता जायेगा। तो, मैं यही आशा रखता हूं कि आप जिस काम में लगे हैं, जहां तक हो सके, उसे आगे बढ़ाते जायेंगे।

नये चेहरों का स्वागत : मुझे यहां आकर एक बात देख करके प्रसन्नता हुई। यहां जो मंडली बैठी है, उनमें बहुत-से परिचित चेहरे नजर आये, जिनके साथ रहने और काम करने का मौका मुझे मिला है। किन्तु उनके अलावा बहुत-से नये चेहरे भी नजर आये। ये नये चेहरे देख मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। नये चेहरों का नजर आना भविष्य के लिए एक बड़ी आशा की बात है। *(संभवतः राजेन्द्र बाबू जेपी की 'सर्वोदय समाज' में पहली उपस्थिति की ओर इशारा कर रहे थे—का. सं.)* पुराने जो मित्र हैं, उनसे मिलने का दिल में जितना उत्साह होता है, वह तो हुआ ही लेकिन साथ-साथ नये चेहरों को देखकर वह खुशी बढ़ी और वह जोश भी बढ़ा। नये भाई काम के लिए तैयार होंगे, तो मैं आशा करता हूं कि बावजूद कठिनाइयों के आपका काम आगे बढ़ेगा।

सर्वोदय-समाज की आवश्यकता : सर्वोदय का काम कई प्रकार से और कई तरीकों से हो रहा है। महात्माजी ने जो कार्यक्रम बतलाया था, वह तो हमारे सामने है ही। लेकिन उसे हम पूरा नहीं कर पाये हैं। और जो आशा की जाती थी कि अधिकार जब हमारे हाथ में आयेगा और शासन का भार हम

अपने ऊपर उठा लेंगे, तो उस कार्यक्रम को बहुत तेजी के साथ आगे ले जा सकेंगे, वह आशा पूरी नहीं हुई है और कह भी नहीं सकते कि कब पूरा होगी।

असल बात यह है कि गवर्नमेंट में जो लोग हैं और बाहर जो लोग हैं, वे सब एक सार्वत्रिक हिचकिचाहट की अवस्था में हैं। मनुष्य जब हिचकिचाहट की अवस्था में पड़ जाता है, तो निर्णय नहीं कर पाता। हमारे सामने जो प्रश्न होते हैं, उनको हल करने का उत्साह हमारे अंदर हो और सिद्धांत भी हमें मालूम हो, तो भी उन्हें अमल में लाने का साहस नहीं होता है। यह जो चकाचौंध आज सब तरफ से हमको घेरे हुए है, उसके सबब से हमारी आंखें दूसरी तरफ को जाती हैं। नजदीक की बात नहीं देख सकतीं। और हम अपने सामने ऐसा आदर्श रखते हैं कि हम भी दूसरों के जैसे क्यों न हो जायँ? दूसरों के आदर्श को सामने रख कर उनका अनुकरण करने की प्रवृत्ति होती है। दूसरों से स्पर्धा करना, उनका मुकाबला करना अच्छा तो है, लेकिन उसमें कोई बुराई नहीं आनी चाहिए। जो बात हमें मिली है, जो रास्ता हमें बताया गया है, उसे पूरी तरह से परखे बिना, काम में लाये बिना, पूरी तरह से अनुभव किये बिना, दूसरी तरफ ताकने में कोई बुद्धिमत्ता नहीं है। पर आज हममें से बहुत से ऐसे ही हैं। *गवर्नमेंट में जो हैं, उनमें से बहुत-से ऐसे हैं कि जो बनी-बनायी चीज उन्हें मिली है उसे ढोये चले जा रहे हैं। हमारा ढर्रा पुराना ही है। हमारे सामने जो आदर्श थे उनपर हम चल नहीं सकते। इसलिए यह मानने लगे कि उन पर पूरी तरह चलना मुमकिन नहीं। और अब उन पर उतना विश्वास भी नहीं रह गया है।*

सर्वोदय-समाज की जो इस वक्त सबसे बड़ी आवश्यकता मालूम होती है, देश में उसके लिए जो उत्साह है, उसकी वजह यह है कि सर्वोदय का काम करने वाले जितने लोग हैं, उनसे हमको यह आशा है कि वे सोच-समझ कर इस रास्ते पर चलते हैं। अगर आप इसी तरह अपने रास्ते पर चलते जायेंगे तो हो सकता है कि ऐसा समय आये कि दूसरे लोग भी आपके रास्ते पर आ जायें, क्योंकि सिद्धांत रूप से इस बात को सभी मानते हैं, पर कार्य रूप से हम उसे नहीं कर पाते। *सर्वोदय का उद्देश्य तो मनुष्यमात्र का उद्देश्य है। वह सर्वोत्तम उद्देश्य है। कोई कार्य करे या न करे, उद्देश्य तो अपनी जगह पर है। आप इस उद्देश्य की पूर्ति में लगे हुए हैं। उसे अपने जीवन का ध्येय मान कर आप इसी तरह ओ बढ़ते जायेंगे तो मैं मानता हूं कि जो भूले भटके हैं, उनको मार्गदर्शन मिलेगा।*

मैं भी भूला-भटका : मैं तो इसलिए आया हूं कि मैं भी भूला-भटका हूं। आपके समागम से, सत्संग से, सहवास से कुछ पाऊंगा। आपके लिए तो यह कोई नयी बात नहीं है, लेकिन मुझे इस तरफ झांकने का, आपके साथ थोड़ी देर रहने का मौका मिल जाय तो भी बड़ी बात है। इस थोड़े से समय में जो मैं यहां देखूंगा और सुनूंगा उससे फिर राह पर आऊंगा, यही उम्मीद है।

जयप्रकाश नारायण

समाजवाद की जगह सर्वोदय : मैंने यह सब बातें जानबझू कर विद्यार्थियों के सामने पेश की, क्योंकि उनके सामने यह सवाल था और उनका बुद्धि-भेद हो रहा था।

उनको लगता था कि हम पथभ्रष्ट हो रहे हैं। हमें बहुत सच्चाई के साथ अपने उद्देश्यों को सामने रखते हुए उनकी प्राप्ति करनी चाहिए। हमारे उद्देश्य जो हैं, वे औरों के भी हैं; पर हमारे साधन दूसरे हैं, ऐसा अभी शंकररावजी ने कहा है, वह ठीक है। अगर वह उद्देश्य शोषणहीन समाज बनाने का है, पर अगर वह हिंसा के मार्ग से प्राप्त किया जाय, तो उद्देश्य हासिल नहीं होते। हिंसा से तो नये प्रकार का शोषण शुरू होता है। शोषण का मतलब है कि एक व्यक्ति को जो हक है, वह उसे नहीं मिलता है। सोलह आना शोषण मिट जायेगा, यह हम नहीं कह सकते। आज भी हमारा जो जीवन है, वह हमारे गरीब भाई से ऊंचा ही है। इसलिए हम उनका शोषण कर रहे हैं, इसमें कोई संदेह नहीं है। आप लोग आज पढ़ रहे हैं। आप पर खर्च हो रहा है। वैसा खर्च गरीब लोग अपने बच्चों की पढ़ाई पर नहीं कर सकते हैं इसलिए आप भी शोषण के हिस्सेदार हैं। *बिलकुल ही शोषण न हो, यह शायद असंभव है। परंतु हमें उस उद्देश्य की ओर बढ़ना चाहिए और अपनी मर्यादा निश्चित करनी चाहिए। रूस में भी तनख्वाह में चालीस गुना फर्क है। ऊंचे अफसरों का जीवन-मान ऊंचा है। तो वहां पर शोषण का अंत नहीं हुआ है, क्योंकि हिंसा के द्वारा उनके हाथ सत्ता आयी और उसी हिंसा से वे तय करते हैं कि उत्पादन का कितना हिस्सा किसको मिलेगा। सच्चा शोषणहीन समाज अहिंसा से ही हो सकता है। इसलिए मुझे इसमें कोई हर्ज नहीं है कि हम समाजवाद का नाम छोड़ दें और सर्वोदय को ले लें।*

विनोबा

सर्व सेवा संघ एकरस हो : रचना में तो हमने एक **'सर्व सेवा संघ'** माना है और दूसरा **'सर्वोदय-समाज'**। 'सर्वोदय-समाज' का नाम चलेगा, 'सर्व सेवा संघ का काम चलेगा। इस तरह एक का नाम और एक का काम, ये दोनों मिल करके हम चलें, तो सर्व सेवा संघ शिथिल संस्था नहीं होगी; बल्कि मजबूत संस्था होगी। और सर्वोदय-समाज शिथिल या अशिथिल, दोनों प्रकार की रचना नहीं होगी; बल्कि वह अरचना होगी, विचार की सत्ता कबूल करने वाली वह मंडली होगी। हमें इस दिशा में सोचना चाहिए कि सर्वोदय-समाज और भी कैसे विचारपरायण बने। सर्वोदय-समाज और अधिक अनुशासन किस तरह माने, यह सोचने की हमें जरूरत नहीं

है : क्योंकि अनुशासन मानने वाला समाज हम बनाना नहीं चाहते। पर वह अधिक विचारवान कैसे बने और विचार की सत्ता उस पर कैसे चले, इस दिशा में हमको काम करना चाहिए। जितने सर्वोदय-समाज के सेवक यहां इकट्ठे हैं, जिन्होंने नाम लिखे हैं और जिन्होंने नाम नहीं लिखे हैं और जो यहां नहीं आये हैं, उन सबके लिए एक विचार की संगति निर्माण हो, यह काम हमें करना चाहिए। इस वास्ते एक तो बात मैंने आम जनता के विचार के लिए बतायी थी कि प्रचार होना चाहिए, घूमना चाहिए। दूसरी बात बता रहा हूं कि साहित्य का प्रचार होना चाहिए, उसका चिन्तन-मनन होना चाहिए। ऐसे वर्ग जगह-जगह चलने चाहिए कि जिसमें हमारे विचार का दूसरे विचारों के साथ तुलना करके अध्ययन हो। इस तरह के आयोजन हमको करने चाहिए, *सर्वोदय-समाज के लिए और सर्व सेवा संघ को एकरस संस्था बनाना चाहिए। मुझे कबूल करना चाहिए कि इस दिशा में इच्छा रखते हुए भी हम बहुत नहीं कर सके हैं। मेरी राय में अगर वह हम नहीं करते हैं, तो जनता के लिए आपसे जो अपेक्षाएं बनी हैं, उन अपेक्षाओं को हम पूरा नहीं करेंगे; बल्कि वह पुराना ढांचा है। भिन्न-भिन्न संस्थाएं काम करती हैं, वह नहीं चलेगा, उससे शक्ति निर्माण नहीं होगी। सर्व सेवा संघ को एकरस बनाये बिना शक्ति नहीं बढ़ेगी।*

मैं कुछ मिसालें दूंगा। मिसालें देने में कुछ नाम लेकर भी मिसालें दूंगा, पर उसका किसी को यह नहीं लगना चाहिए कि मैं दोष बता रहा हूं। और दूसरों के सामने नहीं बता रहा हूं, लेकिन मैं अपने सामने अपना ही दोष बता रहा हूं। और इस ख्याल से मैं कुछ दोष का भी उच्चारण करूंगा। मान लीजिए कि वर्धा में हिन्दुस्तानी प्रचार सभा है। अब वहां क्या होता होगा? विद्यार्थी आते होंगे, पहले आते थे, उससे तो कम आते होंगे—क्योंकि हिन्दी और उर्दू, नागरी और उर्दू, दोनों लिपियां सीखने की बात चलती है, उसके लिए आज वातावरण उतना अनुकूल नहीं है—फिर भी, जो आते होंगे वे बहुत-से तो दो लिपियां और भाषाएं सीखने का अपना कर्तव्य समझते होंगे। लेकिन मैं चाहूंगा कि अगर हमारा समाज एकरस होता तो हिन्दुस्तानी प्रचार सभा में शिक्षण के लिए आने वाले विद्यार्थियों को मैं चार घंटे खेती का काम देता और उसके बाद एकाध घंटा सूत कातने का काम देता, उसके बाद एकाध घंटा रसोई वगैरह काम करेंगे और फिर तीन-चार घंटा उर्दू और हिन्दी, जो कुछ सीखना है वह सीखेंगे। लेकिन आज जिस तरह वहां चलता है, उसमें से शक्ति-निर्माण होना मैं सम्भव नहीं मानता। यह हो नहीं सकता कि उर्दू और नागरी लिपि सीखने वाले कुछ लड़के हमको मिल जायं और उनको वह लिपियां हम सिखायें, और उससे देश में ताकत बढ़ेगी। *अब मैं इतना बोल रहा हूं, आप सुनते हैं, आपके कान अगर काट करके यहां सुनने के लिए रखे जायं और मेरी जबान अगर तोड़ कर बोलने के लिए यहां रखी जाय, तो न मैं बोल सकने वाला हूं और न आप सुन सकने वाले हैं। क्योंकि मैं समग्र हूं और क्योंकि आप समग्र हैं, इसलिए मैं बोल पा रहा हूं और आप सुन पा रहे हैं।* हां, यह ठीक है कि मेरी जबान काम कर रही है, आपके कान काम कर रहे हैं। तो *हिन्दुस्तानी प्रचार सभा* में मुख्य काम चार घंटे का रहेगा, वह उनका *उर्दू और नागरी लिपि* सीखने का रहेगा। फिर भी बाकी का जीवन का हमारा सारा अंश है, वह हमें दाखिल करना होगा, तभी उस उर्दू में ताकत आयेगी, तभी उस नागरी में ताकत आयेगी। यह तो मैंने एक मिसाल दी, ऐसी कई मिसालें मैं दे सकता हूं। **हमारे लोग जो अलग-अलग काम करते हैं, उनमें ताकत क्यों नहीं पैदा होती और जन-समाज में जो क्रांति होनी चाहिए, ऐसी हम आशा रखते हैं, हमारे काम के लिए। वह आशा क्यों नहीं सफल होती। उसका एक ही मुख्य कारण मैं मानता हूं कि हमारे संघ अलग-अलग काम करते हैं।** अच्छा काम वे करते हैं। लेकिन उनको यह मोह है कि हम अलग-अलग हैं, इसलिए कोई खास विचार करते हैं और अगर हम एक हो जायेंगे, तो हमारा विचार कम हो जायेगा, उतने एकाग्र हम नहीं हो पायेंगे, उतनी विविध-वृतित आ जायेगी, और इसलिए जोर कुछ कम पड़ेगा, ऐसा अंदाज करते हैं। मैं कबूल करता हूं कि हरेक योजना में कुछ खामियां होती हैं, कुछ खूबियां होती हैं।

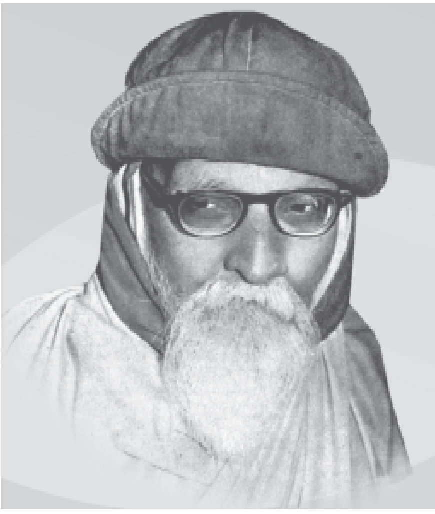

सर्वोदय : नये युग का मिशन

''बापू तो क्रांतिदर्शी थे। बहुत दूर का देख सकते थे, बहुत आगे का सोच सकते थे। इसलिए उन्होंने नये युग के अनुरूप नया मिशन पहले से ही सोच रखा था। उन्होंने देखा कि स्वराज्य मिलते ही 'स्वराज्य' शब्द फिर लोगों को इतनी प्रेरणा, उत्साह नहीं दे सकेगा। स्वराज्य का ध्येय आंखों के सामने था, इसी कारण लोगों में संकल्प-शक्ति पैदा हुई। इसी तरह स्वराज्य के बाद लोगों के सामने कोई व्यापक संकल्प हो, तभी उनकी शक्ति बढ़ेगी। पुराना शब्द सार्थक होने से पूर्व ही दूसरा शब्द देना चाहिए, यह समझकर उन्होंने 'सर्वोदय' शब्द दिया।''

× × ×

''सर्वोदय किसी वाद की प्रतिक्रिया नहीं। वह भारत का अपना शब्द है और भारत की अपनी वस्तु है, पर ऐसा शब्द और ऐसी वस्तु नहीं, जो दूसरे किसी देश या काल को लागू न हो सके। देश-काल-परिस्थिति के भेदानुसार उसकी बाह्य पद्धति में फर्क होता रहेगा। लेकिन उसका आंतरिक रूप शाश्वत रहेगा।'' –विनोबा

लेकिन कुल मिला करके देखते हैं तो ध्यान में आयेगा कि सर्व सेवा संघ को एकरस बनाये बगैर हमें शक्ति का दर्शन नहीं होगा।

सर्व सेवा केन्द्र में ही सब काम हो : *जयप्रकाशजी* ने भी एक दफा उसका जिक्र किया कि सबका एक संघ बन जाय, तो अच्छा रहेगा। ये सब अलग-अलग रह जाते हैं, तो उसमें से ताकत निर्माण नहीं होगी। यह इशारा एक सुहृद और मित्र के नाते उन्होंने किया। और मुझे कहने में खुशी होती है कि उसके बारे में गंभीरता से सोचा जा रहा है। और सर्व सेवा संघ एकरूप बनेगा और जो मुख्य-मुख्य संघ हैं, वे उसमें विलीन होंगे। तो वह निर्णय जब होगा, तब लोगों के सामने आयेगा। मैं तो मानता हूं कि यह दोष छोटे-छोटे कार्यकर्ताओं का नहीं है, जो मुख्य कार्यकर्ता हैं, उन्हीं का यह दोष है। क्योंकि उन्होंने जो एक रास्ता बनाया उसी पर दूसरे जाते हैं। *अगर रास्ता ऐसा बताया होता कि जहां भी कोई काम शुरू होता है, वह सर्व सेवा संघ का ही होता है और सर्व दृष्टि से ही वह काम होगा, यानी सर्व सेवा वह होगी। तो कहीं सिर्फ कताई-मंडल स्थापित नहीं होगा, बल्कि सर्व सेवा केन्द्र ही होगा।* उसमें कताई भी चलेगी, ग्राम-उद्योग भी चलेगा, नयी तालीम चलेगी, हरिजन सेवा चलेगी अर्थात् जो कार्यकर्ता वहां होगा, उसकी शक्ति और वृत्ति के अनुसार किसी काम पर अधिक जोर पड़ेगा, किसी पर कम पड़ेगा। तो वह वहां का कार्यकर्ता वहां की परिस्थिति, मांग आदि पर निर्भर रहेगा। फिर भी जो केन्द्र खुलेगा, वह सर्व सेवा केन्द्र खुलेगा। तो यह विचार किया जा रहा है और वह दोष मिट जायेगा। ऐसा मुझे लगता है। लेकिन मुझे लगा कि इस ओर कार्यकर्ताओं का ध्यान खींचूं और वे सर्वांगी दृष्टि रखकर मिलजुल कर काम पूरा करें, तो अच्छा रहेगा। नहीं तो आज चलता है, वह चंद दिनों तक चलेगा और बाद में सारा का सारा खतम हो जायेगा।

अवयव का पोषण शरीर का भी पोषण है : अब *सर्व सेवा संघ* बना है, तो कई समस्याएं खड़ी होती हैं। संस्थओं का क्या होगा, संस्थाओं के पास जो अलग-अलग पैसा है, उसका क्या होगा, ये सवाल उठते हैं। लेकिन मुझे लगता है कि ये सब सवाल बिलकुल ही गौण हैं। विचार का संशोधन जो चलेगा, वह चलता ही रहेगा; पर बाकी कोई भेद नहीं रहेगा। हिन्दुस्तान में हमारे जो भी केन्द्र बनेंगे, वे सर्व सेवा संघ के केन्द्र होंगे। और पैसा जो अलग-गअलग नाम से इकट्ठा किया होगा, वह सब वहां डूब जायेगा, जैसे नदी समुद्र में विलीन होती है। जहां एक परिपूर्ण काम है, वहां सब काम उसमें आ जाते हैं। मैं भोजन करता हूं, तो यह नहीं देखता कि उसका कितना अंश हृदय के पोषण में गया, कितना पाँव के पोषण में गया, और कितना हाथ के पोषण में गया। ऐसा नहीं हो सकता कि जो कुछ मैं खाता हूं, उससे ही सारे शरीर को पोषण मिल जाता है। लेकिन अगर मैंने ऐसा कुछ खाया है, जैसे आँवला, जिससे कि आँख को विशेष पोषण मिलता है, या स्नेह, जिससे स्नायुओं को खास पोषण मिलता है, तो भी कुल मिला कर जो खाता हूं, उसका सारे शरीर को पोषण मिलता ही है। इस तरह जो भी पैसा आया है, वह सबके लिए है। मानो खादी के लिए साठ लाख और तेलघानी के लिए पचास करोड़ मिला है, किसी ने दान दिया है। तो क्या तेलघानी के काम को खादी से अधिक महत्त्व देना चाहिए? यह नहीं हो सकता। हमारे मन में किस काम को कितना महत्त्व देना हे, इसका नाप होगा, और इसी से हम काम करेंगे। इसमें ट्रस्ट का भंग होगा, ऐसा डर-विचार रखने की कोई जरूरत नहीं है। अगर हम अलग-अलग रहें, तो ऐसी शंका की जा सकती है; पर जहां एकरूप हो गये कि जैसे पूर्वजन्म के भेद लागू नहीं होते, ये भी नहीं लागू होंगे। यह एक तारतम्य की बात है।

अलग-अलग होने पर भी एक : जिस काम के लिए हमें पैसा मिलता है, वह भी आज हम ठीक से खर्च कर रहे हैं, ऐसी बात नहीं है। हम पैसा बैंक में रखते हैं। तो बैंक का पैसा दूसरे कामों में ही तो खर्च होता है, जो कि हमारे विचार के विरोधी काम है। तो इससे बेहतर है कि वह पैसा हमारे ही काम में खर्च हो। जिस प्रमाण में खर्च करना चाहिए, उसी प्रमाण में हम खर्च करेंगे। मानो मुझे खादी के लिए दो लाख मिला है, और तेलघानी के लिए दो करोड़; तो तेलघानी के लिए अधिक पैसा मिलने पर भी हम वह पैसा बिना उसे समझाये नहीं लेंगे, क्योंकि वे फण्ड्स उस जमाने में इकट्ठा हुए, जब अलग-अलग फंड इकट्ठा करते थे। लेकिन अलग-अलग इकट्ठा हुए हों, इसलिए हम आज भी अलग खर्च करें, यह ठीक नहीं; जब कि जमाना बदल गया है। **जैसे पुराने मंदिरों का हाल है। आज हम हरिजनों को उन मंदिरों में जाने दे हैं, तो ट्रस्ट का भंग नहीं होता। इसलिए आज बाकी सब विचार गौण समझने चाहिए और सबको सर्व सेवा संघ में दाखिल हो जाना चाहिए।** परिस्थिति के अनुसार किसी जगह कुछ काम अधिक होगा, पर हम उसी प्रमाण में हर चीज का विकास करेंगे। जिस प्रमाण में हम उसे उचित मानेंगे। हमें केवल बाहूया पाँव ही मजबूत नहीं बनाना है। हम ऐसा एकांगी विकास नहीं करना चाहते हैं। हम हर अंग का नाप बिठायेंगे और उसके अनुसार काम करेंगे। **किसी जगह एक काम अधिक भी हो सकता है, परंतु काम होगा सर्व सेवा संघ का, और उसका नाम भी होगा। हर जिले में ऐसा एक केन्द्र बने, तो बहुत सहूलियत होगी।**

आचार में बुद्धि-भेद निर्माण हुआ, तो समाज का भला नहीं होगा, कर्म-योग नहीं चलेगा, प्रगति नहीं होगी। *विचार-भेद चाहिए, विचार-विमर्श और चिन्तन चाहिए, विचार-शोधन भी होना चाहिए। इसलिए विचार-भेद जरूरी हैं। उसके बगैर विचार-शोधन, विचार-मंथन नहीं होगा। इसलिए हम स्वतंत्र रूप से सोचेंगे। परंतु जहां आचार का सवाल आयेगा, वहां जिस पर एक राय होगी, उसी को धर्म मानेंगे और उसी के अनुसार चलेंगे।* ❑

(सर्वोदय, संपा. विनोबा, कार्य. सं. दादा धर्माधिकारी, मार्च-अप्रैल 1953) **–प्रस्तुति : कार्य. संपादक**

दस्तावेज

चरखा-संघ का सर्व सेवा संघ में विलीनीकरण

अखिल भारत चरखा-संघ ने विलीनीकरण संबंधी निम्नलिखित प्रस्ताव ता. 11 मार्च, 1953 को चांडिल में हुई ट्रस्टी-मंडल की सभा में एकमत से मंजूर किया :

चरखा-संघ को *सर्व सेवा संघ* में विलीन करने के संबंध में संघ के अध्यक्ष श्री धीरेन्द्र मजूमदार का बयान पढ़कर सुनाया गया। विलीनीकरण से चरखा-संघ तथा सर्व सेवा संघ का चालू कार्य-पद्धति में बदल करने के संबंध में बयान में जो विचार प्रदर्शित किये गये हैं उनके बारे में काफी देर तक विचार-मंथन करने के बाद निम्नलिखित प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

''सन् 1944 से, जब से पू. गांधीजी ने चरखा-संघ के नवसंस्करण की बात बतायी, तभी से विभिन्न रचनात्मक संस्थाओं को समग्र सेवा की दृष्टि से एक साथ मिलाकर काम करने का विचार होता रहा है। गांधीजी के निधन के बाद यह विचार निश्चित रूप से रचनात्मक कार्यकर्ताओं के मन में आया और सर्व सेवा संघ का निर्माण हुआ। परंतु बापूजी से प्रेरणा पाकर तथा उनके द्वारा निर्मित भिन्न-भिन्न विशिष्ट रचनात्मक काम करने वाले संघ अपना स्वतंत्र अस्तित्व कायम रख कर सर्व सेवा संघ से जुड़ी हुई संस्था के रूप में रहें या अपना स्वतंत्र अस्तित्व मिटा कर सर्व सेवा संघ में पूर्ण रूप से विलीन हो जायं, यह प्रश्न आज तक बार-बार तीव्र चर्चा का विषय रहा। दो संस्थाओं ने— *गो-सेवा संघ* और *ग्रामोद्योग संघ* ने—विलीन होने का निश्चय कर लिया तथा वे विलीन हो गयीं। भूमिदान यज्ञ आंदोलन के विस्तार के साथ-साथ देश में जो वातावरण पैदा हुआ है और हो रहा है, उसे देखते हुए *चरखा-संघ का ट्रस्टी-मंडल* इसकी अनिवार्य आवश्यकता महसूस कर रहा है कि *अब समय आ गया है कि जब रचनातमक काम करने वाले ये संघ तथा संस्थाएं अलग-अलग रह कर प्रभावशाली काम नहीं कर सकते और न हमारा कार्यक्रम एकांगी रह कर प्राणवान् हो सकता है। साथ-साथ जनता को अहिंसक सामाजिक क्रांति के लक्ष्य की ओर ले जाने की दृष्टि से यह आवश्यक है कि हमारा कार्यक्रम समग्र दृष्टि को लिए हुए हो तथा उसमें एकरसता हो, इसलिए ट्रस्टी-मंडल सभी ट्रस्टियों की उपस्थिति में एकमत होकर निश्चय करता है कि अखिल भारत चरखा-संघ को भी सर्व सेवा संघ से मिला दिया जाय। ट्रस्टी-मंडल का दृढ़ विश्वास है कि इस निर्णय से गांधीजी के चरखा-संघ को दिये हुए अंतिम आदेश की पूर्ति हो रही है और दरिद्रनारायण की समग्र सेवा करने के इस महान् उद्देश्य से गांधीजी ने चरखा-संघ की स्थापना की थी, उसे सफल बनाने की दिशा में यह सही और समयानुकूल कदम है।*

''यह प्रस्ताव कार्यान्वित करने के लिए आवश्यक कानूनी तथा अन्य सभी प्रकार की कार्यवाही अध्यक्ष की सलाह से करने का संपूर्ण अधिकार मंत्री को दिया जाता है।''

सर्व सेवा संघ का प्रस्ताव

चरखा-संघ का प्रस्ताव सर्व सेवा संघ के पास पहुंचने पर अ. भा. सर्व सेवा संघ ने चरखा-संघ को सर्व सेवा संघ में विलीन करने के संबंध में नीचे लिखा प्रस्ताव ता. 11 मार्च 1953 की अपनी बैठक में स्वीकृत किया :

(1) ऑल इण्डिया स्पिनर्स एसोसिएशन—अखिल भारत चरखा संघ का ता. 11-3-'53 का ऑल इण्डिया स्पिनर्स एसोसिएशन—अखिल भारत चरखा-संघ को सर्व सेवा संघ में मिला देने बाबत का प्रस्ताव पढ़ा गया। सर्व सेवा संघ इस प्रस्ताव का स्वागत करता है और निश्चय करता है कि ऑल इण्डिया स्पिनर्स एसोसिएशन—अखिल भारत चरखा-संघ को सर्व सेवा संघ में मिला लिया जाय।

मिला देने की कानूनी कार्रवाई करने का अधिकार संघ के कोषाध्यक्ष, श्री राधाकृष्ण बजाज को दिया गया। अब चरखा-संघ के कामकाज के बारे में सर्व सेवा संघ दूसरा निर्णय न करे, तब तक पूर्ववत कामकाज चलता रहे।

(2) अखिल भारत चरखा संघ के अध्यक्ष, श्री धीरेन्द्रभाई का बयान, चरखा-संघ के प्रस्ताव के साथ आया हुआ, पढ़ा गया। उस पर विचार-विनिमय होकर महसूस किया गया कि इस पर अधिक गंभीरतापूर्वक विचार होने की आवश्यकता है, इसलिए वह बयान संघ के सारे सदस्यों को परिपत्रित किया जाय। यह भी निश्चय हुआ कि इस बारे में संघ के मंत्री व चरखा-संघ के मंत्री, दोनों मिल कर एक निश्चित रूपरेखा अगली सभा में पेश करें। (सर्वोदय, मार्च-अप्रैल, 1953)

संसद-सदस्यों का प्रस्ताव : भू-दान-यज्ञ से देश का पुनर्निर्माण

''संसद के दोनों सदनों के सदस्यों का यह सम्मेलन, आचार्य विनोबा भावे के आरम्भ किये हुए भूदान-यज्ञ का गंभीर महत्त्व अनुभव करता है, जिससे देश के सामाजिक, आर्थिक पुनर्निर्माण में एक नया अध्याय आरम्भ हो गया है।

''सम्मेलन को हार्दिक आशा है कि सामान्य जनता और विशेषतः संसद तथा विधान-सभाओं के सदस्य इस महान् और उदात्त आंदोलन में सक्रिय सहायता देंगे और आचार्य विनोबा भाव को पचीस लाख एकड़ भूमि मार्च 1954 तक प्राप्त करने में हाथ बंटायेंगे।''

उपर्युक्त प्रस्ताव के उद्देश्य पूर्ति के लिए नियुक्त संगठन समिति के सदस्य :

श्री जवाहरलाल नेहरू, श्री काकासाहब कालेलकर, श्री पुरुषोत्तमदास टंडन, श्री केलप्पन, श्री श्रीमन्नारायण और श्री कृष्णन् नायर। संयोजक : श्रीमती सुचेता कृपालानी और श्री राधारमण, अध्यक्ष : डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन् (उपराष्ट्रपति)। ❑

विरासत

अखिल भारत सर्व सेवा संघ का अवतरण एवं आरोहण!

शुक्रवार, 30 जनवरी, 1948, सायंकाल। बिड़ला हाउस, नयी दिल्ली के मैदान में सार्वजनिक प्रार्थना में सम्मिलित होने बापू प्रार्थना-स्थल की ओर बढ़ते हैं। राष्ट्रपिता अपने ही एक गुमराह पुत्र की पिस्तौल की गोलियों से अनंत निद्रा में लीन हो जाते हैं। धाराशायी होने से पूर्व उनके मुखारबिन्दु से हे राम! ये दो शब्द निकलते हैं और हत्यारे को करबद्ध प्रणाम करते हैं।

जिस तरह 'अमृत-मंथन' की पौराणिक कथा में 'अमृत' और 'विष' दोनों प्राप्त हुए थे और शिव ने हलाहल को पान कर जग की रक्षा की, गांधी ने भी स्वतंत्रता आंदोलन के समुद्र मंथन से जो आजादी स्वरूप अमृत प्राप्त हुआ वह हमें दे दिया और उससे निकले साम्प्रदायिकता हलाहल को अकेले पी गये। महान लेखिका पर्ल एस वक ने सच कहा ''इंडिया ने दूसरी बार ईसा को सूली पर चढ़ता देखा।''

रविन्द्रनाथ ठाकुर की कविता 'महा-मृत्युंजय' गांधी की मृत्यु से पहले ही लिख डाली जैसे इसका पूर्व आभास रहा हो। ईसा-मसीह की तरह गांधी भी तो 'मृत्युंजय' ही ठहरे।

गांधी ने अपने महाप्रयाण के ठीक एक ही दिन पहले 29 जनवरी, 1948 को एक वक्तव्य लिखा था जो *आखिरी वसीयतनामा* माना जाता है जो गांधी के द्वारा भारत की स्वतंत्रता के पूर्व के कुछ महीनों में तथा राजनैतिक सत्ता भारतीयों को हस्तांतरण के बाद के कुछ हफ्तों में राजनैतिक वर्ग के लोगों की क्रियाकलापों के सूक्ष्म निरीक्षण का परिणाम था जिसमें उन्होंने कांग्रेस को भंग करने तथा इसको *लोकसेवक संघ* के रूप में कर लेने के लिए प्रस्ताव किया था। बापू इस निष्कर्ष पर पहुंच गये थे कि राजनैतिक संगठन एवं राजनेतागण स्वार्थ के वशीभूत हो जनसेवा की सच्ची भावना से दूर होने लगे थे। गांधी ने *सेवाग्राम* में एक सम्मेलन बुलाने की योजना भी बना ली थी, जिसमें वे इसे मूर्तरूप देना चाहते थे। किन्तु दुर्भाग्यवश उसे गांधी नहीं देख सके। किन्तु हत्या के छः सप्ताह बाद सेवाग्राम में कुछ जन पुरुष और महिलाएं एकत्र होकर गांधी के विचारों को मूर्त रूप देने के लिए मार्च 1948 के सम्मेलन में *'सर्व सेवा संघ'* या *अखिल भारत सर्वोदय मंडल* की स्थापना करते हैं जिसे हम 'श्वेत-कमल' की संज्ञा दें तो अतिशयोक्ति नहीं होगी।

भारत की राजधानी से आये हैं देश के प्रधानमंत्री *जवाहरलाल नेहरू* और उनके साथ हैं शिक्षा मंत्री *मौलाना आजाद*। वहां और भी हौसले में हैं कांग्रेस के अध्यक्ष *डॉ. राजेन्द्र प्रसाद* सभा की अध्यक्षता करते हुए। सभा में उपस्थित हैं *गांधी कुल के रत्न आचार्य जे.बी. कृपालानी, जे. सी. कुमारप्पा, जयप्रकाश नारायण, काका कालेलकर, विनोबा विचार-मंथन* में लीन। क्यों न एक नयी संस्था बनायें, एक नया संघ जो मौजूदा इकाईयों को जोड़ दे और उनमें एक नई जोश पैदा कर दे—सबलता प्रदान कर दे?

विनोबा कहते हैं एक भाईचारा बने जिसमें जो भी खुद को *गांधी* का अनुयायी मानता है वह शामिल हो। कुछ और कहते हैं कि ऐसे ढीलेढाले संगठन से मार्गदर्शन नहीं मिलेगा, जिसकी हम सबों को तत्काल जरूरत है। चिन्तन-बहस का सिलसिला चलता है, फिर तय होता है कि एक *'सर्वोदय समाज'* की स्थापना हो। कुछ संशोधन एवं सुधार के बाद *'अखिल भारत सर्व सेवा संघ'* का जन्म होता है। *सर्व सेवा संघ* गांधी से प्रेरित रचनात्मक संस्थाओं का एक मिलापी संघ तथा *'सर्वोदय समाज'* एक *व्यापक भाईचारे के रूप* में बनाया जाता है। इसका उद्देश्य गांधीजी की इस योजना को आगे बढ़ाना है जिसमें सत्य और अहिंसा पर आधारित एक ऐसा जातिविहीन तथा गैर-शोषक समाज बनाने में सहायता करना है, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति तथा समूह को अपनी सर्वोत्तम क्षमता के अनुसार विकसित होने का पूर्ण अवसर मिले। इसके सदस्यों यानी लोकसेवकों को किसी भी राजनीतिक दल में शामिल होने की मनाही की गयी जो अभी तक लागू है।

इस तरह हम कह सकते हैं कि भारत के करोड़ों क्रंदन व आंसुओं एवं गांधी के रक्तदान से निकला एक 'श्वेत-कमल' है 'सर्व सेवा संघ' जिसने आजादी के बाद न जाने कितने राष्ट्रीय, अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर रचनात्मक कार्य एवं शांतिमय संघर्ष, सच्चे स्वराज्य, संपूर्ण क्रांति और सर्वोदय की मशाल जो गांधी से मिली थी उसे थामे प्रयत्नशील है और उसका आरोहण जारी है।—अशोक मोती

× × ×

सर्व सेवा संघ

उद्देश्य : सत्य और अहिंसा पर आधारित ऐसे समाज की स्थापना करना है, जिसमें जीवन मानवीय तथा लोकतांत्रिक मूल्यों से अनुप्राणित हो, जो शोषण, दमन, अनीति और अन्याय से मुक्त हो तथा जिसमें मानव-व्यक्तित्व के समग्र विकास के लिए पर्याप्त अवसर हो।

इस उद्देश्य की सिद्धि की दृष्टि से संघ राज्य-सत्ता की प्राप्ति के लिए होने वाली प्रतिद्वंद्विता से सर्वथा निर्लिप्त रहेगा। वह ऐसे लोकतंत्र के विकास तथा स्थापना के लिए प्रयत्नशील होगा, जिसका आधार दलीय राजनीति नहीं, बल्कि शासन-निरपेक्ष लोकनीति होगी। वह समाज में जाति, पंथ, सम्प्रदाय, वर्ण, लिंग, रंग, भाषा आदि के कारण उत्पन्न होने वाले भेदभाव को नहीं स्वीकार करेगा। उसका प्रयत्न होगा कि एक ऐसी जीवन-पद्धति का विकास हो, जिसमें मानव-मानव के बीच निरंतर समता और साझेदारी बढ़े, वर्गों का निराकरण हो, पूंजी और श्रम का विरोध मिटे तथा विकेन्द्रित अर्थव्यवस्था के अंतर्गत खादी और कृषि-उद्योग, पशुपालन जीविका के मुख्य साधन बनें।

संघ अपने कार्यक्रमों द्वारा शांति, प्रेम, मैत्री, करुणा और न्याय की उदात्त भावनाओं को जागृत करेगा। अहिंसा की मर्यादाओं का पालन करते हुए संघ लोकशक्ति का निर्माण करेगा तथा **संपूर्ण क्रांति** द्वारा **सर्वोदय** की सिद्धि के लिए रचनात्मक कार्यक्रम और आवश्यकतानुसार सत्याग्रह के उपायों का प्रयोग करेगा।

सदस्यता : जिला सर्वोदय मंडलों की ओर से निर्वाचित प्रतिनिधियों और प्रतिनिधियों की कुल संख्या के 10 प्रतिशत की मर्यादा में अध्यक्ष द्वारा मनोनीत लोकसेवकों को मिलाकर सर्व सेवा संघ बनता है।

लोकसेवक : 18 साल या उससे अधिक आयु का हर व्यक्ति, जो लोकसेवक की निष्ठाओं को मानते हुए सदस्यता-पत्र पर हस्ताक्षर करता है, लोकसेवक बन सकेगा, बशर्ते सदस्यता के लिए उसे ऐसे दो लोकसेवकों का अनुमोदन प्राप्त हो, जो कम-से-कम दो वर्ष से लोकसेवक हों।

लोकसेवक की निष्ठाएँ :

1. मैंने सर्व सेवा संघ के उद्देश्य अच्छी तरह से समझ लिये हैं। मैं घोषित करता हूं कि उनमें मेरी पूर्ण निष्ठा है। मैं उन्हें अपने और समाज के जीवन में उतारने का पूरा प्रयत्न करूंगा।
2. मैं सत्य, अहिंसा, शाधन-शुद्धि, उत्पादक शरीर-श्रम तथा समानता के जीवन-मूल्यों को मानता हूं। उत्पादक-श्रम जैसे—खोती-बागवानी, कताई, सफाई, खाद बनाना आदि कामों में से एक या अधिक काम मैं नियमित रूप से करूंगा। अपने वस्त्र के लिए मैं मौजूदा प्रमाणित खादी या सर्व सेवा संघ द्वारा प्रमाणित खादी का ही प्रयोग करूंगा। मैं शराब आदि मादक-द्रव्यों का उपयोग नहीं करूंगा। मैं अपने जीवन में तथा व्यवहार में छुआछूत, जातिगत ऊंच-नीच को या भेदभाव को स्थान नहीं दूंगा। मेरा सर्वधर्म-समभाव तथा स्त्री-पुरुष समानता में श्रद्धा है।
3. मेरा विश्वास है कि लोकनीति से ही सच्चे लोकतंत्र की स्थापना हो सकेगी तथा उसी से जन-जन को वास्तविक स्वतंत्रता प्राप्त होगी। इसे ध्यान में रखते हुए मैं किसी राजनीतिक दल का सदस्य नहीं बनूंगा और न सत्ता के किसी पद के लिए प्रत्याशी होऊंगा। मैं लोकतंत्र के बुनियादी मूल्यों की रक्षा और स्थापना की चेष्टा करता रहूंगा।
4. मैं शक्ति भर अंतिम व्यक्ति को ध्यान में रखकर समाज की नि;स्वार्थ सेवा करूंगा, किसी उद्देश्य की सिद्धि के लिए अशुद्ध उपायों का इस्तेमाल नहीं करूंगा।
5. असत्य या अन्याय के प्रतिकार के लिए हमेशा तत्पर रहूंगा।
6. नित्य स्वाध्याय के लिए समय निकालूंगा।
7. सदस्यता शुल्क के रूप में मैं सर्व सेवा संघ को प्रतिवर्ष 25.00 रुपये (यथा संशोधित) या 5 गुण्डी (प्रति गुण्डी पांच सौ तार) अपना कता हुआ सूत दूंगा।

सर्वोदय मित्र : कोई भी व्यक्ति जो सत्य, अहिंसा के बुनियादी मूल्यों को मानता हो तथा सर्व सेवा संघ के उद्देश्य और कार्यक्रम के प्रति सहानुभूति और सहयोग की भावना रखता हो, सर्वोदय-मित्र बन सकता है। अपनी भावना के प्रतीक के रूप में वह जिला सर्वोदय मंडल या यदि जिले में सर्वोदय मंडल न हो तो प्रदेश सर्वोदय मंडल या सर्व सेवा संघ को वर्ष में पांच रुपये देगा। सर्वोदय-मित्र का सदस्यता-पत्र कार्यसमिति समय-समय पर तय करेगी।

सर्वोदय मंडल

प्राथमिक सर्वोदय मंडल : किसी एक क्षेत्र में काम करने वाले कम-से-कम 5 लोकसेवकों की संगठित इकाई 'प्राथमिक सर्वोदय मंडल' कहलायेगी।

जिला सर्वोदय मंडल : लोकसेवकों की संख्या कम-से-कम 25 हो तो वे मिलकर 'जिला सर्वोदय मंडल' का गठन कर सकेंगे। अथवा जिस जिले में 10 लोकसेवक और कम-से-कम 15 सर्वोदय-मित्र बने हों, वहां जिला सर्वोदय मंडल का गठन किया जा सकता है, लेकिन हर हालत में मंडल का पदाधिकारी लोकसेवकों में से ही होगा।

प्रदेश सर्वोदय मंडल : जिला सर्वोदय मंडलों के संयोजक अथवा अध्यक्ष तथा जिले के एक प्रतिनिधि को मिलाकर हर राज्य में एक 'प्रदेश सर्वोदय मंडल' होगा।

प्राथमिक सर्वोदय मंडल, जिला सर्वोदय मंडल, नगर सर्वोदय मंडल तथा प्रदेश सर्वोदय मंडल, सर्व सेवा संघ की समय-समय पर निर्धारित नीति-रीति के अंतर्गत अपनी सामान्य कार्य-पद्धति तय करने के लिए स्वतंत्र होंगे।

सर्वोदय-समाज

सर्वोदय-समाज का गठन 13 मार्च, 1948 को सेवाग्राम में आयोजित रचनात्मक कार्यकर्ता सम्मेलन में हुआ।

उद्देश्य : सत्य और अहिंसा पर आधारित एक ऐसा समाज बनाने की कोशिश करना, जिसमें जात-पांत न हो, जिसमें किसी को किसी का शोषण करने का मौका न हो और जिसमें समूह व व्यक्ति दोनों को विकास करने का पूरा अवसर हो।

बुनियादी सिद्धांत : साध्य की तरह ही साधन की शुद्धि का आग्रह।

सेवकों का रजिस्टर : ऊपर लिखे हुए उद्देश्य तथा बुनियादी सिद्धांत को जो मानता है और उनके मुताबिक काम करने की कोशिश करता है, वह 'सर्वोदय-समाज' के संयोजक को वैसी सूचना दे और अपना नाम-पता भेज दे। ऐसे सेवक का नाम और पता समाज के रजिस्टर में दर्ज किया जायेगा। सेवकों के आपस के संपर्क और विचार-विनिमय के लिए हर साल सर्वोदय-सम्मेलन किया जायेगा।

कार्य संचालन : सेवकों का रजिस्टर रखना, देश-विदेश के सेवकों तथा सर्वोदय प्रेमी लोगों से पत्र-व्यावहारादि से संबंध बनाये रखना, सर्वोदय-दिवस, सर्वोदय-मेला, सर्वोदय सम्मेलन वगैरह के बारे में जरूरी सूचनाएं समय-समय पर देना आदि कामों की जिम्मेदारी सर्व सेवा संघ द्वारा नियुक्त सर्वोदय समाज-संयोजक की रहेगी, जो स्वायत्त रूप से कार्य करेगा।

वर्तमान में 'सर्व सेवा संघ' के अध्यक्ष भाई महादेव विद्रोही तथा 'सर्वोदय- समाज' के संयोजक भाई आदित्य पटनायक हैं। ❑

चंदन पाल मंत्री मनोनीत हुए

सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष भाई महादेव विद्रोही ने सर्वोदय के वरिष्ठ कार्यकर्ता भाई चंदन पाल को सर्व सेवा संघ का मंत्री मनोनीत किया है। भाई चंदन पालन ने सामाजिक कार्य की शुरुआत तरुण शांति सैनिक के रूप में की और बंगला देश युद्ध में बने शरणार्थियों की सेवा में तथा असम के कोकराझार बोडो आंदोलन के दौरान सर्व सेवा संघ और गांधी शांति प्रतिष्ठान की ओर से चलाये गये कार्य का बड़ी कुशलतापूर्वक संयोजन किया।

दस्तावेज

सबकी भलाई का काम सर्वोदय

❑ विनोबा

''सर्व सेवा संघ आज जैसा है, वैसा जरूर होना चाहिए और वह हज़ार साल टिकना चाहिए।''

× × ×

''सर्व सेवा संघ अखिल भारत को जोड़ने वाला है और दूसरी बात, वह समस्त दुनिया को भी जोड़ने वाला है।'' –विनोबा

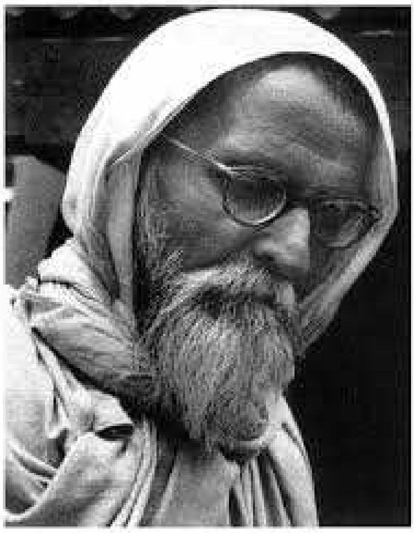

1906 की कलकत्ता कांग्रेस में दादाभाई नौरोजी ने 'स्वराज्य' शब्द का उच्चारण किया। तब से स्वराज्य प्रत्यक्ष हाजिर होने में चालीस साल निकल गये। इसके भी पहले कांग्रेस देश के उत्थान का काम करती रही, पर 'स्वराज्य' शब्द तब नहीं था। इसलिए उस प्रयत्न को हम न गिनें, तो भी चालीस साल लगातार जिन्होंने स्वराज्य के लिए काम किया ऐसे भी लोग हो गये और कुछ आज भी विद्यमान हैं। गांधीजी ने 'हिन्द स्वराज्य' लिखा। वह मेरे खयाल से 1907 या 08 में लिखा होगा। उसमें उन्होंने स्वराज्य की अपनी कल्पना पेश की है। और उसकी प्राप्ति के लिए मेरा जीवन समर्पित है, ऐसी प्रतिज्ञा उस किताब के अंत में गांधीजी ने की है। तो तब से आखिर तक यानी करीब चालीस साल उसके लिए सतत काम करते रहे और उसके साथ कुछ लोगों ने भी उसमें जीवन समर्पित कर दिया। राजकीय, सियासी आजादी हासिल हुई। उसके बाद, अब आर्थिक आजादी का सवाल मेरे सामने पेश है। और उसका आरंभ भूदान यज्ञ से हो रहा है।

सब कोई समझते हैं कि यह एक बुनियादी काम है और एक अहिंसक आर्थिक क्रांति इसमें निहित है। इस काम को दो साल होते आये। दो साल के आंदोलन का नतीजा यह हुआ कि हिन्दुस्तान भर में, कम-से-कम जहां तक शिक्षित वर्ग का ताल्लुक है, यह बात पहुंच गयी और लोग उसका महत्त्व समझ गये। तो अब मेरे सामने सवाल है कि इस काम के लिए पूर्ण एकाग्रता से लग जाने वाले कितने भाई-बहन मैं प्राप्त कर सकता हूं।

रविशंकर महाराज को गुजरात का बच्चा-बच्चा जानता है, हिन्दुस्तान के कई कार्यकर्ता जानते हैं। वे अभी चीन हो आये। उन्होंने ग्रामीण दृष्टि, स्वराज की दृष्टि और अहिंसा की दृष्टि से चीन के उत्थान को देखा। यहां आने के बाद कहने लगे कि चीन तो अपनी राज चल रहा है। हिन्दुस्तान में अगर कोई ऐसा काम दिख रहा है, तो वह भूदान-यज्ञ का है। ऐसा कह कर वे इस काम में लग गये हैं और गांव-गांव घूमते हैं। बबलभाई ने मुझे लिखा है कि उन्होंने संकल्प कर लिया है कि 1957 तक वह इस काम में लगे रहेंगे। यह छोटी बात नहीं है। मैंने ही 1957 की बात लोगों के सामने रखी थी।

स्वराज की प्राप्ति के बाद काल की गति कुछ बढ़ती है, बढ़नी चाहिए, पांच साल में बनना चाहिए। हुआ उलटा है। स्वराज-प्राप्ति के बाद लोगों में शिथिलता आयी है। परमेश्वर की लीला है! एक प्रकाश जाने के बाद, और दूसरा प्रकाश आने के पहले, बीच में घना अंधेरा छा जाता है। तो उसकी योजनानुसार जो बात होती है उसमें हमें दुःख नहीं होना चाहिए, बल्कि उसमें से मार्ग निकालना चाहिए। शिथिलता को मिटाने में कुछ समय जरूर लगेगा। फिर भी यदि स्वराज-राजकीय स्वराज हमें हासिल हुआ है, तो उसका परिणाम कालगति बढ़ने में दीख पड़ना चाहिए। आंदोलन के दो सला बीत चुके। पहला साल तो लोगों को कल्पना समझाने में गया और उसमें जिसकी कल्पना थी वह अकेला काम करता था, पर उसकी शिकायत नहीं है। बुद्ध भगवान ने जब नया विचार पाया तो अकेले ही घूमते रहे। मुहम्मद पैगम्बर को जब दर्शन हुआ तो आरंभ के समय बहुत थोड़े ही साथी थे।

जैसे नदी गिरी-गुहा में पैदा होती है और एकांत में बहा करती है, वैसे ही महान् विचारों का जन्म किसी हृदय-गुहा में होता है और फिर वह विचार एकाकी विचरता है। मनुष्य, जिसको कि वह विचार सूझा, वह तो निमित्त मात्र-वाहन मात्र होता है। जैसे गरुड़ वाहन के रूप में मिल गया, तो उसका उपयोग कर लिया। पर गरुड़ नहीं होता, तो भी विष्णु भगवान घूमते ही। तो विचार एकाकी घूमता है। वैसे ही मेरा हुआ। वैसे पांच साल काम के लिए पर्याप्त होने चाहिए, ऐसा मैंने माना। कैसे होंगे? मैंने सोचा कि बिहार में भगवान बुद्ध का नाम लेकर इसके लिए हम मर मिटें। अब करीब छः महीने पूरे होने आये। चार साल का पहले संकल्प था। अभी भी पंद्रह दिन बाकी हैं। मालूम नहीं, इतना पूरा होगा या नहीं। अब भी हो सकता है। लेकिन जो भी हो, मुझे तो आगे की स्फूर्ति मिल गयी। वैसे ही, जैसे आकाश बिलकुल साफ होता है और सूर्य का स्पष्ट दर्शन होता है, वैसे ही इसका स्पष्ट दर्शन मुझे हुआ है। जाना कि हम लोगों को जगा सकते हैं। कार्यकर्ताओं के वृत्ति-भेदों को हम मिटा सकते हैं, इसमें कोई संदेह नहीं। इसके लिए अधिक हृदय-शुद्धि चाहिए। यह जो एकांत मुझे मिला, परमेश्वर ने यह बीमारी का जो दान मुझे दिया, इससे जो मौका मिला, उसका उपयोग मैंने बहुत ही अंतःपरीक्षण करने में किया और अंतःकरण की जितनी गहराई में मैं पहुंच सकता था उतनी गहराई में पहुंचने की मैंने कोशिश की है। काम तो बाहर करना है, पर उसका उद्गम अंदर होता है। इसलिए अंतःकरण की गहराई में मैं पहुंचा। इस निरीक्षण के समय मैंने अपने में बहुत त्रुटियां,

बहुत दोष पाये। अपने में यानी अपने स्वरूप में नहीं, बाहरी रूप में—मैंने जो चोला लिया है उसमें। और उसके निवारण के लिए मैं प्रयत्नशील हूं। उसमें आशातीत यश मिल रहा है। जब यह अंतरानुभव होता है तो बाहर काम बढ़ने वाला ही है। यह कहने के लिए किसी ज्योतिषी की आवश्यकता नहीं है, कोई पंचाग देखने की जरूरत नहीं है। 'पूर्णमदः, पूर्णमिदं'—पूर्ण है वह, पूर्ण है यह। एक पूर्ण होत है, तो उसका जो प्रतिबिम्बस्वरूप है वह पूर्ण होना ही चाहिए।

इतना सब पांच-छः महीनों के प्रयत्न में हमने किया। उसमें इधर के कार्यकर्ताओं की वृत्ति विशेष प्रकट हुई, दोष भी और गुण भी। लेकिन कुल मिलाकर बिहार में मैंने बहुत ही सद्‌भाव पाया। इससे अधिक सद्‌भाव की अपेक्षा किसी जनता से कोई नहीं कर सकता। बावजूद इसके कि जनता बहुत सुखी नहीं है, पीड़ित है, अपनी सांसारिक चिन्ता में त्रस्त है; फिर भी इस काम का स्वागत किया, उसको समझा। यद्यपि अभी तक बड़े काश्तकारों, जमींदारों से इतना निकट सम्पर्क नहीं आ सका, जितना कि आना चाहिए। उनके बगैर यह काम नहीं होगा। फिर भी मुझे विश्वास है कि जो अब तक नहीं हुआ है, वह अब होगा और उनके दिलों को मैं बता सकूंगा, जता सकूंगा कि यह काम सबकी भलाई के लिए है। इस काम में उनकी यानी बड़ों की भलाई है, वैसे ही छोटों की यानी गरीबों की भलाई है।

यह अक्षरशः सर्वोदय है, सबका उदय है। किसी का अस्त इसमें नहीं है। हरेक की उन्नति और उत्कर्ष होना है। तो यह मेरा विश्वास है।

आप यानी चंद भाई, जो मेरे साथी हैं, जिन्होंने दिन-रात इस काम के लिए मेहनत उठायी है, जिनसे बढ़ कर अच्छे साथियों की अपेक्षा नहीं की जा सकती, उनके सामने मेरे हृदय के भाव प्रकट करने की इच्छा हुई। कुछ तो सर्वोदय-सम्मेलन में मैं कहूंगा, पर उसी का एक विचार प्रस्तावनारूप आज मैंने यहां रख दिया। ❑

(सर्वोदय, सं. विनोबा, का.सं. दादा धर्माधिकारी, चांडिल, 19.2.1953)

कांग्रेस-गांधी जनता और क्रांति

❑ आचार्य जे. बी. कृपालानी

पार्टियों और गुटों से क्रान्ति नहीं होती। सच्ची क्रान्ति जनता के आन्दोलन से होती है। क्रान्ति का सूत्रपात करनेवाला चाहे कोई व्यक्ति हो, गुट हो या वर्ग हो, किसी-न-किसी समय—अच्छा हो, शुरू से ही—उसमें जनता का शामिल होना आवश्यक है। हो सकता है कि क्रान्ति सफल हो जाने पर जनता को धोखा दे दिया जाय (इतिहास में कई क्रान्तियों में ऐसा हुआ है और प्रतीत होता है कि आज भारत में

भी ऐसा ही हो रहा है), पर जनता ही संघर्ष में अपनी जान लड़ाती है और अपनी सम्मिलित आत्म-शक्ति से उसे शक्ति प्रदान करती है।

जनता का योगदान : क्रान्ति अचानक नहीं होती। क्रान्ति एक ऐतिहासिक घटना होती है, जिसकी जड़ें भूतकाल में छिपी रहती हैं। जब किसी देश की सामाजिक और आर्थिक अवस्था एक निश्चित सीमा तक पहुँच जाती है, तो नियत समय पर क्रान्ति होती है। *क्रान्ति मानवता के एक संघटित समूह का आध्यात्मिक पुनर्जन्म है।* जिस प्रकार किसी व्यक्ति के आध्यात्मिक पुनर्जन्म के पूर्व एक संकट की घड़ी आती है, जो उसके बीते जीवन से सर्वथा भिन्न-सी प्रतीत होती है, जिसमें उसके विचार, आदर्श, सोचने का ढंग, भावनाएँ और कार्य सब कुछ बदल जाते हैं, *उसी प्रकार एक विशेष सामाजिक स्थिति में क्रान्ति भी एक आध्यात्मिक संकट की घड़ी होती है।*

क्रान्ति का अर्थ होता है : भूतकाल के विचारों, आदर्शों, सोचने के तरीकों, भावनाओं और कार्यों से तात्त्विक विभेद। यह जनता का पुनर्जन्म होता है। इसलिए इसमें जनता का शामिल होना आवश्यक है।

जनता ही क्रान्ति करती है! समाज में आन्दोलन चलते रहते हैं, पर यदि उनका सम्बन्ध आम जनता से नहीं है, तो क्रान्ति न होगी। विश्व के धार्मिक इतिहास से यह बात और भी स्पष्ट की जा सकती है। धार्मिक सुधारों के लिए अक्सर पाण्डित्यपूर्ण और दार्शनिक योजनाएँ सामने रखी जाती हैं, पर यदि साधारण जनता से उनका ताल्लुक नहीं, तो थोड़े समय के लिए एक अस्थायी पंथ चलकर चीज समाप्त हो जाती है। उदाहरणार्थ, अकबर ने दार्शनिक आधार पर एक ऐसे विश्व-धर्म की स्थापना का यत्न किया, जो मनुष्य की विवेक-बुद्धि पर आधृत हो। पर उसकी सारी योजना अच्छी होते हुए भी कतिपय बुद्धिवादियों तक ही सीमित रह गयी। जनता ने उसे नहीं अपनाया, फलस्वरूप अपने संस्थापक के साथ-साथ अकबर का *'दीन-इलाही'* भी मर गया। थोड़े ही दिनों की बात है कि हिन्दू-धर्म में ऐसे बहुत-से सुधारक पंथों की स्थापना हुई, जिनका उद्देश्य हिन्दू-धर्म की बुराइयों को मिटाना था, पर उनका जनता से सम्पर्क नहीं हो पाया, इसलिए उनका विकास नहीं हुआ और वह चीज भी थोड़े पढ़े-लिखे शिक्षित लोगों से आगे नहीं बढ़ सकी। आम जनता का जीवन उससे अछूता ही रह गया। ब्रह्मवाद (थियोसोफी) में बड़ी ही बुद्धिमानी की बातें कही गयी हैं, पर जनता में इसका प्रचार न होने से इसका भविष्य कुछ भी नहीं है।

जनता का नेतृत्व : किसी भी क्रान्ति

को, चाहे यह धार्मिक हो या राजनैतिक या अन्य कोई, सफल और स्थायी बनाने के लिए जनता में उसकी जड़ जमाना आवश्यक है। *भारत में यदि क्रान्ति की स्थिति थी, तो उस क्रान्ति को सफल बनाने के लिए उसमें जनता का सहयोग प्राप्त करना आवश्यक था; उसे जनता तक पहुँचाने के लिए नेतृत्व को भी क्रान्तिकारी होना आवश्यक था। गांधीजी का नेतृत्व ऐसा ही था।* आजाद भारत की शक्ल कैसी होगी, गांधीजी इसे पहचानते थे। *दक्षिण अफ्रीका से भारत लौटने के पूर्व ही उनकी 'हिन्द-स्वराज' नामक पुस्तक प्रकाशित हो चुकी थी। उसमें भारत के पुनर्जीवन की एक योजना थी। आप उससे सहमत हों या न हों, पर उनके प्रस्ताव सर्वथा नूतन, क्रान्तिकारी और साहसपूर्ण थे।* उन्होंने अपने घर तथा दक्षिण अफ्रीका के कुछ आश्रमों में छोटे पैमाने पर उनका प्रयोग भी किया था। अपने जीवन के ढंग के सम्बन्ध में वे प्रचार भी कर रहे थे। दक्षिण अफ्रीका की सत्याग्रह की लड़ाई उनकी इन्हीं क्रान्तिकारी कल्पनाओं पर आधृत थी। जीवन का उनका ढंग किसी खास व्यक्ति या वर्ग के लिए नहीं, बल्कि सारे समाज के लिए था, जिसमें सम्पूर्ण जनता शामिल होती है।

गांधीजी ने जो भी प्रयोग या कार्य किये, वे सम्पूर्ण जनता को लेकर ही हुए। जनता का हित उनका प्रथम और प्रधान ध्येय था। जनता को जिस प्रकार का जीवन बिताने की शिक्षा वे देते थे, उन्होंने अपना जीवन भी वैसा ही बना लिया था। आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक समता में उनका दृढ़ विश्वास था। गांधीजी का विश्वास था कि प्रत्येक मनुष्य को, वह चाहे किसी पेशे का हो, किसी प्रकार का शारीरिक श्रम अवश्य करना चाहिए। शारीरिक श्रम का वे बड़ा आदर करते थे। उनका विश्वास था कि शारीरिक श्रम शरीर ही नहीं, बल्कि मस्तिष्क और हृदय के लिए भी संजीवनी-बूटी है। इससे बुद्धि व्यावहारिक और यथार्थवादी होती है, इससे नैतिकता का वाक्छल तथा ढोंग मिटता है। शारीरिक श्रम सामाजिक विभेदों को मिटाता है। सन् 1921 में ही 'यंग इण्डिया' में गांधीजी ने लिखा था :

''प्रश्न किया जा सकता है कि कोई व्यक्ति कताई का काम क्यों करे, जब उसे रोटी कमाने की जरूरत नहीं? मुझे काम करना चाहिए, क्योंकि मैं जो भोजन करता हूँ, वह मेरा नहीं है। यदि मैं बिना काम किये भोजन करता हूँ, तो देशवासियों का माल लूटता हूँ। आपकी जेब में पैसे कैसे आते हैं, जिस दिन आप यह जान जायेंगे, उस दिन मेरे कथन का सत्य भी आपको मालूम हो जायेगा।

''नंगों को कपड़े देकर हमें उनकी बेइज्जती नहीं करनी है, क्योंकि उन्हें कपड़े की नहीं, काम की आवश्यकता है। मैं उनका संरक्षक बनने का पाप न करूँगा, पर यह जानकर कि उनकी दरिद्रता का मैं भी निमित्त हूँ, मैं उन्हें फटे-पुराने, उतारे हुए कपड़े नहीं दूँगा, बल्कि उन्हें अच्छा-से-अच्छा भोजन और कपड़ा दूँगा और उनके साथ काम में जुट जाऊँगा।

''ईश्वर ने मनुष्य को इसलिए बनाया है कि वह अपनी रोटी के लिए परिश्रम करे। ईश्वर का कथन है कि जो बिना परिश्रम किये खाते हैं, वे चोर हैं।''

जनता के साथ एकरस : अपनी इस पीठिका के साथ गांधीजी भारत आये। राजनीति में प्रवेश करने से पूर्व उन्होंने यहाँ किसानों और मजदूरों की सहायता की थी। गांधीजी की रहन-सहन भारतीय जनता की रहन-सहन थी। ब्रिटेन के अपने दीर्घ प्रवास में उन्होंने जो कुछ यूरोपीय रंग-ढंग सीखे थे, उन्हें उन्होंने तिलाञ्जलि दे दी। सार्वजनिक सभाओं में वे हिन्दी में ही बोलते थे, चाहे वह एकदम टूटी-फूटी ही क्यों न हो। उसी हिन्दी में वे अपने हृदय के भावों को प्रकट करने की कोशिश करते थे। वे जानते थे कि जनता उनकी टूटी-फूटी हिन्दी को सरल-से-सरल अंग्रेजी से भी अधिक समझ सकेगी। केवल निजी बातचीत में जब उनसे प्रार्थना की जाती थी, तभी वे विदेशी भाषा में बोलते थे।

जनता की संस्था : बाद में जब *गांधीजी राजनीति के क्षेत्र में उतरे और उन्होंने खिलाफत और भारत की आजादी की लड़ाइयों का संचालन किया, तो उन्होंने कांग्रेस को जनता की संस्था बनाने की कोशिश की। उन्होंने कांग्रेस का विधान ही बदल दिया। तब तक कांग्रेस अंग्रेजी पढ़े-लिखे बाबुओं की जमात थी। अंग्रेजी में उसकी सारी कार्रवाई होती थी। उसके उद्देश्यों और आदर्शों में भी शिक्षित समुदाय के हित-साधन का ही जिक्र था। कांग्रेस का उद्देश्य था, सरकारी नौकरियों मे—विशेषतः ऊँचे तबके के—हिन्दुस्तानियों को अधिक-से-अधिक हिस्सा दिलाना। उसकी मांग थी कि इंगलैड के साथ-साथ हिन्दुस्तान में भी भारतीय सिविल सर्विस (आई० सी० एस०) की परीक्षा हुआ करे।* कांग्रेस चाहती थी कि स्वायत्त शासन और प्रान्तीय तथा केन्द्रीय धारा-सभाओं का विस्तार हो, ताकि हिन्दुस्तानियों को उसमें अधिक-से-अधिक संख्या में शामिल किया जा सके। कांग्रेस ने पहले आन्दोलन किया कि बाइसराय की शासन-परिषद् में कोई हिन्दुस्तानी रखा जाय, फिर आगे आन्दोलन किया कि गैर-सरकारी हिन्दुस्तानी रखे जायें। ब्रिटिश-साम्राज्य में सबकी नागरिकता समान हो, इस बात के लिए कांग्रेस ने कोशिश की। यद्यपि बाद में कांग्रेस ने अपना उद्देश्य *'स्वराज्य'* घोषित कर दिया था, पर वास्तविकता यह थी कि वह शासन में 'शिक्षित' हिन्दुस्तानियों को ('शिक्षित' से तात्पर्य अंग्रेजी पढ़े लिखे लोगों से ही था) अधिक-से-अधिक संख्या में सम्मिलित कराने पर ही विशेष ध्यान देती थी, संस्कृत या प्रान्तीय भाषाओं का बड़ा-से-बड़ा पण्डित उस समय 'शिक्षित' नहीं समझा जाता था।

कांग्रेस स्वाधीनता की नहीं, इंग्लैण्ड की आधी अधीनता की वकालत करती थी और पढ़े-लिखे हिन्दुस्तानियों की सुविधा में वृद्धि कराने के लिए 'प्लैटफार्म' का काम करती थी। यह एक प्रचारवादी संस्था थी।

बड़े दिन के अवसर पर जब पढ़े-लिखे लोगों को छुट्टी रहती है, वर्ष में 3 दिनों के लिए कांग्रेस का वार्षिकोत्सव होता था; प्रस्ताव 'पास' किये जाते थे और अगले साल फिर एकत्र होने के लिए लोग बिदा हो जाते थे। भारत में उद्योगों की उन्नति के लिए कभी-कभी कुछ फीकी-फीकी-सी बातें हो जाया करती थीं। पर कांग्रेस के नेता विदेशी वस्तुओं और फैशन को ही प्रश्रय देते थे। उनके दिमाग में औद्योगिक उत्थान का कोई स्पष्ट खाका न था। अपने अंग्रेज-प्रभुओं की शिक्षा से उनको विश्वास हो गया था कि ब्रिटिश-उद्योग और उन्मुक्त व्यापार से भारत का बड़ा लाभ है। भारत की गरीबी के सम्बन्ध में उनकी कल्पना बड़ी धुँधली थी। किताबों से इससे अधिक जानकारी भी कैसे होती? गाँवों में या शहर को गलीज-भरी गलियों में, जहाँ वे कभी गये ही नहीं, उस गरीबी का क्या अर्थ होता है, यह उन्हें पता न था और वे न तो यही सोच सकते थे कि यह गरीबी दूर कैसे होगी। सारांश यह कि कांग्रेस की उस समय की राजनीति भावुकतापूर्ण तथा यथार्थता से शून्य थी।

कांग्रेस, गांधी के हाथों में : गांधीजी ने कांग्रेस की कायापलट कर दी। *उन्होंने कांग्रेस का विधान बदल दिया तथा कांग्रेस को जनता का एक लोकतांत्रिक संघटन बना दिया। उन्होंने अंग्रेजी के स्थान पर हिन्दुस्तानी को कांग्रेस की स्वीकृत भाषा बनाया,* कांग्रेस के उद्देश्य स्पष्ट किये और साथ ही उनकी सिद्धि कैसे होगी,

यह भी बतलाया। अब कांग्रेस के प्लैटफार्म से केवल पढे-लिखे लोगों के हित-साधक प्रस्ताव 'पास' होने बन्द हो गये। कांग्रेस के मंच से हिन्दुस्तान में आई. सी. एस. परीक्षा लेने तथा शक्तिहीन गुड़िया विधान-सभाओं में हिन्दुस्तानियों का प्रतिनिधित्व बढ़ानेवाले नारे लगाने भी बन्द हो गये। *गांधीजी के नेतृत्व में कांग्रेस केवल प्रचारवादी और शोर-गुल मचानेवाली संस्था न रह गयी। अब वह कर्मठ संस्था बन गयी तथा सारे देश में उसकी शाखाएँ खुल गयीं। उसके अध्यक्ष और मंत्री ऐसे व्यक्ति चुने जाने लगे, जो अपना पूरा समय उसके संघटन में लगाते। ये शाखाएँ सुदूर देहात के ऐसे गाँवों में खुल गयीं, जहाँ सरकारी नौकरों के अतिरिक्त कोई पढ़ा-लिखा कभी जाता ही न था।*

यह काम केवल राजनैतिक ही न था। इसमें सामाजिक और आर्थिक सुधारों का भी प्रश्न आ गया। इस प्रकार जनता से सम्पर्क बढ़ाकर गांधीजी ने देश के पढ़े-लिखे लोगों को देश की दुस्सह गरीबी की चक्की से परिचित कराया। अब वे जान गये कि गरीबी सचमुच क्या चीज है। *इस नयी कांग्रेस का अपना रचनात्मक कार्यक्रम था, जिसमें राष्ट्रीय जीवन के सभी अंगों का प्रतिनिधित्व रहा। अब केवल सरकार के नाम पास होनेवाले प्रस्तावों का युग बदल गया। अब कांग्रेस के प्रस्ताव जनता को संबोधित किये जाने लगे। स्वराज्य विदेशी शासकों से दान में मिलेगा, अब ऐसी कल्पनाएँ छोड़ दी गयीं। कांग्रेस ने घोषित किया कि जनता का स्वराज्य जन्मसिद्ध अधिकार है, इसके लिए हमें यत्न और त्याग करना है, यातनाएँ झेलनी हैं, और जरूरत पड़ने पर अपना सिर भी कटाना पड़ सकता है।* अब कांग्रेस का आदर्श-वाक्य (मोटो) हो गया, 'राष्ट्र अपना निर्माण स्वयं करते हैं।' *कांग्रेस ने अर्जी, विरोध-पत्र और प्रार्थनाओं का युग समाप्त कर दिया; वह अब अपनी मांगें पेश करने लगी तथा उनके ठुकराये जाने पर वह सक्रिय कदम उठाने को भी प्रस्तुत हुई। कांग्रेस का सारा रचनात्मक कार्यक्रम यानी स्वदेशी, खादी, ग्रामोद्योग, अस्पृश्यता-निवारण, हिन्दू-मुसलिम एकता, राष्ट्रीय शिक्षा आदि जनता द्वारा पूरा कराने का यत्न प्रारम्भ हुआ।*

नया दृष्टिकोण : राष्ट्रीय संस्था में इन क्रान्तिकारी परिवर्तनों का समावेश ही नहीं हुआ, बल्कि सम्पूर्ण देश की विचारधारा, उसके आदर्श और उसकी मान्यताएँ भी बदल गयीं। *अब गुरुत्व का केन्द्र पढ़े-लिखे लोगों से हटकर आम जनता में पहुँच गया।* संघटित होनेवाली जनता को स्वतन्त्रता ही नहीं, बल्कि एक ऐसे समाज के निर्माण की दीक्षा दी गयी, जिसका आधार न्याय और समता हो। देश-प्रेम किसी वर्ग-विशेष की बपौती नहीं, वह सारी जनता की वस्तु है। बूढ़े-जवान, नर-नारी, यहाँ तक कि बच्चों को भी उनकी वय और योग्यता के अनुसार काम सौंप दिया गया, ताकि वे यह समझें कि वे एक पुण्य-कार्य और धर्म की लड़ाई में सम्मिलित हुए हैं। राष्ट्र ने अपने अधिकारों की आवाज बुलन्द की थी सही, पर उसे कर्त्तव्यों का भार सँभालने की भी शिक्षा दी जा रही थी; प्रतियोगिता और प्रतिद्वन्द्विता देश-भक्ति के कार्यो मे ही रह गयी, अधिकार-लिप्सा में नहीं। *हमारे बीच जो बड़े-से-बड़े थे, वे 'कांग्रेस का स्वयंसेवक' होने में गर्व का अनुभव करते थे* (यद्यपि अब यह शब्द केवल उन्हीं कांग्रसियों के लिए रह गया है, जो सत्तारूढ़ नहीं हैं)। जनता को दृष्टि में रखकर ही *सत्याग्रह* और *सविनय अवज्ञा* की कल्पना की गयी और उसी ने जेलों को भरा; उसने लाठियों और गोलियों की बौछारें सहीं और थोड़े समय के लिए शासन-यंत्र को ठप कर दिया और अंत में विदेशियों को अच्छी तरह समझा दिया कि भारत छोड़ने में ही उनका हित है।

राजनीति के अतिरिक्त कांग्रेस का सामाजिक और आर्थिक कार्यक्रम भी था। आर्थिक कार्यक्रम का आधार केवल इंग्लैड की अधीनता छोड़ना ही नहीं, बल्कि देश के पूँजीपतियों और जमींदारों की अधीनता और उनके शोषण का भी अन्त था। इसका उद्देश्य आर्थिक समता तथा देश का नव-निर्माण था। सामाजिक क्षेत्र में इसका उद्देश्य छुआछूत और इसके साथ-साथ जात-पाँत और स्त्री-पुरुष का कृत्रिम भेद मिटाना था।

अहिंसा की लड़ाई में *स्त्री* और *पुरुष* ने कंधे-से-कंधा मिलाकर काम किया। अतः भारतीय नारीत्व के लिए कार्य के क्षेत्र में ऊँचे-से-ऊँचे स्थान की प्राप्ति के लिए कोई बाधा नहीं रह गयी।

लोगों ने आम जनता की भाँति मोटी खादी पहननी शुरू की तथा गाँवों में किसानों तथा हरिजनों के साथ घुल-मिल कर अपने जीवन को सीधा-सादा बनाया। नगरों में कांग्रेस ने कल-कारखानों के मजदूरों का संघटन किया। कांग्रेस का उद्देश्य ऐसी क्रान्ति करना था, जिसमें सबको समता प्राप्त थी, गारंटी थी। आम जनता इसमें शामिल हुई थी। इसलिए आजादी का फल भी उसे ही मिलना चाहिए था। जनता ने अभी अपने अधिकार नहीं पहचाने हैं, इसलिए इस क्रान्ति को हम असफल कह सकते हैं। इससे देश की जनता के असंतोष और निराशा का भी अर्थ स्पष्ट हो जाता है। गांधीजी और उनकी कांग्रेस ने साफ-साफ घोषणा कर दी थी कि जब जनता और किसी वर्ग के हितों में संघर्ष हो, तो जनता का हित ही सर्वोपरि है।

इस प्रकार गांधीजी ने क्रान्तिकारी आन्दोलन की दूसरी शर्त पूरी की। धीरे-धीरे उन्होंने उस विस्तृत युद्ध में जनता को भी ला खड़ा किया, जिससे सारे देश की कायापलट होनी थी। उसे केवल वोट देने का अधिकार ही नहीं मिलना था, बल्कि राजनैतिक और आर्थिक विकेन्द्रीकरण द्वारा अपना प्रबन्ध स्वयं अपने हाथों करना था। 1925 में ही उन्होंने 'स्वराज्य' की परिभाषा यों की थी—

स्वराज्य का तात्पर्य : *''स्वराज्य से मेरा तात्पर्य भारत की उस सरकार से है, जो स्त्री-पुरुष, वासी-अधिवासी, किसी का भेद किये बिना ऐसी बालिग जनता के बहुमत से बनी हो, जो राज्य को अपना श्रम देते हों और जिन्होंने मतदाता-सूची में खुद अपना नाम दर्ज करा लिया हो। मुझे उम्मीद है, स्वराज्य चन्द लोगों के सत्ताग्रहण करने से नहीं आयेगा, बल्कि स्वराज्य तब होगा, जब सभी में इतनी सामर्थ्य आ जाय कि वे सत्ता का दुरुपयोग होने पर सत्ताधिकारियों का विरोध कर सकें। दूसरे शब्दों में, स्वराज्य की प्राप्ति तब होगी, जब जनता को इतना शिक्षित कर दिया जाय कि वह सत्ता का संतुलन और नियन्त्रण कर सके।''*

—यंग इंडिया, 29 जनवरी, 1925

लक्ष्य-वेध में असफलता : कांग्रेस की जीत तो जरूर हुई, पर इस सीमा तक पहुँचने में वह असफल रही है। कम-से-कम वह उस उद्देश्य तक नहीं पहुँच सकी है, जिसे राष्ट्रपिता ने देश को बतलाया था तथा कांग्रेस ने स्वीकार किया था और जिसे वह हर साल दुहराती रहती है। हो सकता है, इसकी प्राप्ति के लिए गांधीजी ने जो साधन बतलाये थे, वे उपयुक्त नहीं थे और उनके पुण्य-कार्य की पूर्ति के लिए दूसरी क्रान्ति की आवश्यकता पड़े। स्वतन्त्र भारत बालिग मताधिकार पर आधृत केवल वैधानिक लोकतंत्र से ही संतुष्ट हो जायेगा, यह असम्भव है। देश के सामने नये मसले हैं, जिन्हें हो सकता है, पुराने नेता हल न कर सकें। इस प्रश्न का निर्णय तो निकट भविष्य में ही हो जायेगा। ❑

('गांधी : एक राजनैतिक अध्ययन' से साभार)

विरासत

सर्वोदय की दृष्टि

थोड़ा-सा भ्रम-निवारण

❑ दादा धर्माधिकारी

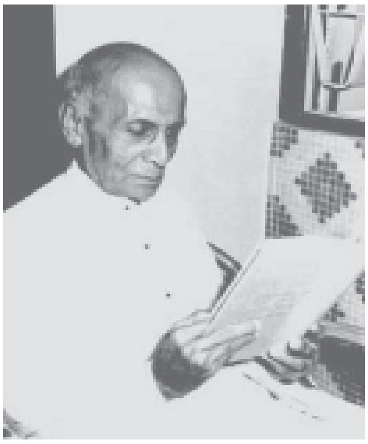

'दान' की व्याप्ति

भूदान-यज्ञ के संबंध में कुछ मूलभूत भ्रम है, जिनके कारण कई अनावश्यक आक्षेप कार्यकत्रओं के भी मन में उठते हैं। *'दान'* शब्द के बारे में आम तौर पर जो आक्षेप किये जाते हैं, उनका समाधान करने की कोशिश *'सर्वोदय'* में स्वयं *विनोबा* ने और प्रस्तुत लेखक ने की है। फिर भी कई प्रामाणिक कार्यकर्ताओं के मन में कहीं कुछ खटका रह जाता है। इसका कारण यह है कि 'दान' शब्द के अर्थ की और उसके प्रयोग की व्याप्ति कार्यकर्ताओं की समझ में अच्छी तरह नहीं आयी है।

श्रमिक क्रांति

यह ख्याल गलत है कि भूदान-यज्ञ में दान सिर्फ अमीरों को ही देना है। विनोबा गरीबों से भी दान मांगते हैं और धन्यतापूर्वक ले लेते हैं। वे कहते हैं कि गरीबों की क्रांति-सेना का निर्माण और संगठन दूसरी कोई पद्धति से नहीं हो सकता। हम गरीब आदमी की हुकूमत के साथ-साथ उसकी मालकियत भी कायम करना चाहते हैं। यही आर्थिक क्रांति की प्रक्रिया है। गरीब आदमी की मालकियत का अर्थ है उत्पादक की मालकियत। जो उत्पादक है, आज उसके पास उत्पादन के औजारों के सिवा दूसरे कोई औजार नहीं है। इसलिए गरीब आदमी की क्रांति हथियारों के द्वारा नहीं हो सकती। गरीब गरीब है, इतना कह देने से यह स्पष्ट ही हो जाता है कि पैसे की ताकत उसके पास नहीं है। तब सवाल यह होता है कि बगैर पैसे के और बगैर हथियारों के गरीबों की फौज किस तरह बनें?

गरीब का अपरिग्रह

भूदान-यज्ञ आंदोलन के प्रणेता ने यह योजना की है कि गरीब आदमी अपरिग्रह के प्रयोग का आरम्भ करे। उसका परिग्रह याने उसकी सम्पत्ति इतनी थोड़ी है कि एक तरह से उसको सम्पत्ति कहना भी मजाक है। परंतु उस नगण्य मालकियत से भी वह चिपका रहना चाहता है। उसे यह डर है कि इस छोटी-सी मालकियत को में छोड़ दूंगा तो कहीं का नहीं रहूंगा। छोटी-सी मालकियत का नाम गरीबी है। अगर गरीब आदमी उस छोटी-सी मालकियत का विसर्जन सामुदायिक मालकियत में कर देता है, तो वह खोता कुछ नहीं, और पाता सब कुछ है। इसलिए गरीब आदमी के दान के लिए 'यज्ञ' संज्ञा का प्रयोग किया गया है।

गरीबों की सेना

गरीब जब अपनी अल्प सम्पत्ति में से भी सार्वजनिक सम्पत्ति के यज्ञ में आहुति दे देता है तो वह एक गरीब और दूसरे गरीब के बीच स्नेह-बंधन का निर्माण करता है। त्याग और बलिदान के डोरे से बंधे हुए ये गरीब एक अजेय सेना का निर्माण करेंगे।

विषमता का निराकरण क्यों?

आखिर हम अमीर और गरीब के फर्क को क्यों मिटा देना चाहते हैं? इसीलिए न कि अमीरी और गरीबी आदमी को आदमी से अलग कर देती है? जो तजवीज जुदाई पैदा करती है वह नापाक है। व्यवस्था ऐसी चाहिए कि जो आदमी को आदमी के साथ मिलाये। सबके साथ गरीब अमीरों के द्वेष की भूमिका पर अगर इकट्ठे होते हैं तो उनमें परस्पर स्नेह का भावरूप बंधन नहीं होता। अमीरों की सम्पत्ति छीन लेने के बाद सारे उत्पादकों को कृत्रिम बंधनों से बांध कर रखना पड़ेगा। यह डर हमेशा रहेगा कि ये कृत्रिम बंधन कहीं ढीले न पड़ जायँ। इसलिए उन बंधनों को ज्यादा सख्त और मजबूत बनाने की ही चेष्टा निरंतर होती रहेगी। इन बंधनों के विलीन हो जाने की कोई संभावना निकट या दूरवर्ती भविष्य में नहीं दिखायी देगी।

क्रांति का आधार

इसलिए क्रांति की प्रक्रिया भी ऐसी चाहिए, जिसका आधार भावरूप स्नेह हो। *भूदान-यज्ञ आंदोलन में यह विशेषता है। गरीब अपनी-अपनी अल्प संपत्ति समर्पित करके एक दूसरे के साथ स्नेह-बंधन से बंध जाते हैं।* गरीबों का इस प्रकार का भाईचारा कायम हो जाने के बाद मुट्ठी भर अमीर अलग नहीं रह सकते। अमीरी की यह शर्त है कि बहुत-से गरीबों का परिश्रम खरीदने का अवसर हमेशा बना रहे। जहां यह अवसर खत्म हुआ, अमीरी की नींव ही ढह जाती है।

सत्ता का नाश

अब एक इतना ही अंतिम आक्षेप रह जाता है कि मनुष्य समाज का इतना भरोसा करना अव्यावहारिक है। इस आक्षेप के जवाब में बहुत अदब के साथ एक परिप्रश्न किया जा सकता है। अगर संपत्ति मनुष्य की वृत्ति को बिगाड़ कर उसमें जहर पैदा कर देती है, तो क्या सत्ता का हलाहल संपत्ति के गरल से कम भयानक होता है? गरीबों को सुखी और समृद्ध बनाने के लिए जो मुट्ठी भर आदमी अपने हाथों में शस्त्र-प्रयोग से सत्ता लेंगे, वे क्या फरिश्ते और देवता होंगे? क्या उनमें सत्ता का उन्माद पैदा नहीं होगा?

मनुष्य पर भरोसा

मतलब यह कि मनुष्य की शुभ प्रवृत्ति पर कहीं-कहीं जाकर विश्वास रखना ही पड़ता है। मनुष्य में अविश्वास के आधार पर मानवता के उत्कर्ष की पोषक कोई क्रांति नहीं हो सकती। जो लोग साधनशुद्धि का आग्रहपूर्वक प्रातिपादन करते हैं उनकी बात में तर्कसंगति तो है ही, परंतु उससे कहीं अधिक वास्तविकता है। भूदान-यज्ञ आंदोलन में एक दानी और दूसरा भिखारी, ऐसी कल्पना नहीं है। यह दान उत्सर्ग और समर्पण की प्रक्रिया का आरंभ है। जो अमीर दान देता है, वह भी क्रांति की सेना में दर्ज हो जाता है। जो गरीब उत्सर्ग करता है, वह तो क्रांति की वर्दी पहन कर उसका अग्रदूत ही बन जाता है।

क्रांति की सेना

रामराज्य की फौज जितनी अनोखी उतनी ही विक्रमशाली थी। विनोबा के ग्रामराज्य की यह सेना भी अपने ढंग की अनूठी और पराक्रमी होगी। ❑

(साभार : सर्वोदय, मार्च-अप्रैल, 1953, संपा. विनोबा, कार्य. संपा. दादा धर्माधिकारी)

अभिलेख

सर्वोदय की नींव

❑ सतीशचंद्र दासगुप्ता

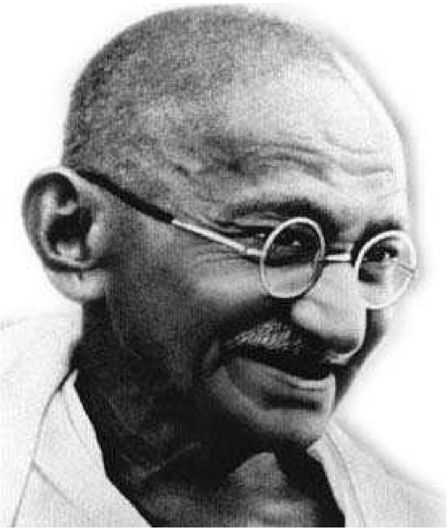

'स्वराज' शब्द से गांधीजी एक ऐसे राज्य की कल्पना करते थे, जिसके सभी प्रजाजनों में एक-दूसरे की भलाई चाहने का—सर्वोदय का—भाव ओतप्रोत हो और जिसमें सम्पत्ति की असमानता होते हुए भी गरीब और श्रीमान् की वर्ग-श्रेणियां न हों, जिसमें सम्पत्ति, बुद्धि और अनुकूल परिस्थितियों के कारण जो लोग विशेष साधन-सम्पन्न हों वे अपनी जीवन-यात्रा इस तरह चलाते होंगे, जिससे इन साधनों से वंचित लोग भी उनके सहभागी बन जायं। विशेष साधन-सम्पन्न लोग साधनविहीन लोगों के ट्रस्टी होंगे—फिर चाहे वे साधन बुद्धि या सम्पत्ति के हों या अनुकूल परिस्थितियों के हों, अपने परिश्रम से प्राप्त किये हों अथवा दैववशात् प्राप्त हुए हों। गांधीजी व्यक्तिगत और सामाजिक आचार-व्यवहार के लिए सत्य और अहिंसा के सिद्धांतों को अपना निश्चल पथप्रदर्शक मानते थे। जहां तक मैं समझ सका हूं, जिस प्रकार की समाज-व्यवस्था स्थापन करने का प्रयत्न वे करते रहे, वह इन्हीं सिद्धांतों से फलित होने वाले उपसिद्धांतरूप थीं।

सर्वोदय-प्रदर्शनी का महत्त्व

सर्वोदय-प्रदर्शनी के नाम के साथ जो 'सर्वोदय' शब्द जोड़ा गया, वह एक महान् विचार प्रकट करने वाला शब्द है। इसका विवेचन हमारे देश के पूर्वाचार्य करते आये हैं, परंतु राजकीय स्वातंत्र्य प्राप्त करने के लिए तथा समाज की स्थिति को सुधारने के लिए गांधीजी ने जो तरीके और कार्यक्रम अमल में लाये, उसके कारण सर्वोदय का विचार केवल विचार-सृष्टि की चीज न हरकर व्यवहार-क्षेत्र की चीज हो पायी है।

तात्त्विक दृष्टि से सर्वोदय-विचार अधिक-से-अधिक लोगों का अधिक-से-अधिक हित-साधन के विचार का मुकाबला करने वाला विरोधी विचार है। सर्वोदय का अर्थ है—सबका हित-साधन। इस विचार में न तो जीवनार्थ संघर्ष के लिए अवकाश है, और न उसके फलस्वरूप निर्बलों की हार और प्रबलों की जीत वलो मत्स्य-न्याय को ही। सर्वोदय की धारा इससे बिलकुल उलटी दिशा में बहती है। यह एक ऐसा साधन-मार्ग है, जिससे व्यक्तिगत और सामूहिक मुक्ति साध्य हो सकती है। सर्वोदय-प्रदर्शनी महज कलात्मक या नित्योपयोगी वस्तुओं की या ऐसी चीजों के निर्माण की विधि बताने की जगह नहीं है। परंतु वह एक विशिष्ट प्रकार के जीवन का दर्शन कराने का प्रयत्न है।

प्रदर्शनी का रूप बाजारू न हो

कांग्रेस के वार्षिक अधिवेशन के साथ खादी-प्रदर्शनी करने की कल्पना गांधीजी ने अहमदाबाद-कांग्रेस के वक्त की। वह एक ऐसा जमाना था कि जब कांग्रेस की हरेक प्रवृत्ति में पवित्र भावना और दृढ़ संकल्प-शक्ति झलक रही थी। अहमदाबाद-प्रदर्शनी से एक नया उपक्रम शुरू हुआ। प्रदर्शित की जाने वाली वस्तुओं में तथा उनकी प्रक्रियाओं में एक नयी समाज-रचना की झांकी दिखायी देने लगी। लेकिन बाद में कांग्रेस रास्ता भटक गयी और मद्रास की कांग्रेस-प्रदर्शनी तो एक बाजारू चीज बन गयी, जहां मनोरंजन के लिए लोग जमा होते थे तथा दुकानदार भी केवल मुनाफे के लिए ही अपना माल सजाकर रखते थे। कांग्रेस अधिवेशन की गंभीरता से प्रतिकूल प्रदर्शनीय वस्तुओं की भरमार और दिलबहलाव तथा मौज-शौक के वायुमंडल ने नये तेज को दबा दिया। इसका वर्णन गांधीजी ने 'घृणात्मक कार्य' इन शब्दों में किया।

सन् 1929 की कलकत्ता कांग्रेस अधिवेशन के साथ हुई प्रदर्शनी का हाल भी ऐसा ही रहा। यहां तक कि बंगाल के कुछ रचनात्मक कार्यकर्ताओं ने उसका बहिष्कार किया था। इस प्रदर्शनी के बारे में गांधीजी ने जो सुना, उससे उन्हें दुःख हुआ। परिणामतः गांधीजी ने 'यंग इंडिया' में उसका जबरदस्त निषेध किया और प्रदर्शनी की तुलना 'सर्कस' के तमाशे से की।

प्रदर्शनी का केन्द्रबिन्दु : खादी

आखिर 1934 में प्रदर्शनी करने की पद्धति में एक कायमी स्वरूप का बदल हुआ। स्वागत समिति की एवज में प्रदर्शनी का संगठन **अखिल भारत चरखा-संघ** तथा **अखिल भारत ग्रामोद्योग संघ** स्वागत समिति के सहकार से करें, ऐसी व्यवस्था तय की गयी। प्रदर्शनी खादी और ग्रामोद्योग प्रदर्शनी के नाम से करने का सूत्रपात हुआ। धीरे-धीरे खादी की कल्पना का विकास होता गया। चरखा सूर्य माना गया और ग्राम-सेवा की विविध रचनात्मक प्रवृत्तियां उसके इर्द-गिर्द घूमने वाली ग्रहमाला मानी गयी अर्थात् प्रदर्शनी में खादी को केन्द्रस्थान प्राप्त हुआ और अन्य प्रवृत्तियां भी यथाक्रम स्थान पाती गयीं।

सर्वोदय-प्रदर्शनी का लक्ष्य

सन् 1938 में गांधीजी के सामाजिक तत्त्वज्ञान के अनुरूप शिक्षा-प्रणाली बनाने का प्रयत्न किया गया और उसी में से नयी तालीम का जन्म हुआ। नयी तालीम को भी प्रदर्शनी में स्थान मिला। इस तरह नैसर्गिक

विकासक्रम से हम इस सर्वोदय-प्रदर्शनी तक पहुंच गये हैं। यह केवल कोरी प्रदर्शनी नहीं है। वर्गविहीन समाज अर्थात् सर्वोदय-समाज, जिसमें स्पर्धा की जगह सहयोग और अधिकाधिक संग्रह की अधम अभिलाषा के स्थान पर मनवता का विकास करने का प्रयत्न हो, ऐसा समाज निर्माण किया जा सकता है। उसी के उदाहरणस्वरूप यह प्रदर्शनी है।

सर्वोदय की कल्पना को लेकर जब हम सामाजिक जीवन का विचार करते हैं, तो भारतवर्ष में जो चार विरासतें हमें प्राप्त हुई हैं उनको ठीक तरह समझ लेना और उनकी रक्षा करना हमारे लिए आवश्यक हो जाता है।

ये चार विरासतें हैं :

1. मनुष्य-शक्ति, 2. जमीन तथा कृषि, 3. गाय और 4. ग्रामोद्योग और दस्तकारियां।

ये चार मूलभूत चीजें हैं, जिनकी नींव पर विश्वकल्याणकारी समाज-व्यवस्था की रचना आज भी की जा सकती है, जिसकी परिणति **सर्वोदय समाज के निर्माण** में होगी। इन चारों विषयों के बारे में हमें विचार करना है, क्योंकि प्रदर्शनी में चारों चीजों का समावेश किया गया।

नयी तालीम द्वारा मनुष्य-शक्ति का विकास

मनुष्य एक चिरंतन विद्यार्थी है, जो उत्तरोत्तर श्रेष्ठ प्रकार के सिद्धियुक्त जीवन के लिए प्रयत्न करता रहता है, ऐसी कल्पना है। माता के गर्भ में मनुष्य जन्म धारण करता है तब से प्रारम्भ होकर मृत्यु के बाद भूमाता की गोद में वह आश्रय लेता है, तब तक उसकी शिक्षा विधि चलती ही रहती है। इसलिए नयी तालीम में पूर्व बुनियादी, बुनियादी, उत्तर बुनियादी, इस तरह एक के बाद एक मंजिलें हैं। नयी तालीम मनुष्य को अत्युच्च श्रेणी का सामाजिक जीव बनाने का प्रयत्न करती है, जो अपने से दुर्बल लोगों को दबाने में आनन्द नहीं मानेगा और जो मनुष्य-समाज में 'सर्वेषाम् अविरोधेन' की वृत्ति से घुलमिल कर जीवन व्यतीत करता रहेगा। ऐसा मनुष्य के लिए शरीर-परिश्रम द्वारा जीवन की आवश्यक वस्तुओं का निर्माण करना शिक्षा प्राप्त करने का मूलभूत माध्यम होगा। किताबी पढ़ाई के साथ थोड़ा हस्तव्यवसाय भी करना ऐसी नयी तालीम की कल्पना नहीं है, बल्कि सारी शिक्षा का माध्यम ही हस्तव्यवसाय होगा। नयी तालीम में हमारे बालक-बालिकाएं काम करना सीखेंगी और जीवन की आवश्यकताएं प्राप्त करने के लिए परिश्रम करते-करते ही जीवन-शास्त्र का ज्ञान प्राप्त करती रहेंगी। शरीर-परिश्रम तो उनके लिए एक आनन्द की चीज होती है। जब वे कारीगर या श्रमिक के नाते अपना जीवन प्रारम्भ करेंगे, तब भी काम

करते-करते उनके ज्ञान-संग्रह में प्रत्यक्ष व्यवहार तथा स्वाध्याय और संशोधन-कार्य से वृद्धि होती रहेगी। वे खुद खेतीहर या कारीगर हैं, इसके कारण न तो उनमें हीनता का भाव पैदा होगा और न विद्वान् होने पर भी, अपनी आजीविका शरीर-परिश्रम से प्राप्त कर लेते हैं, इसलिए अहंता का भाव पैदा होगा।

शरीर-परिश्रम को प्रतिष्ठा देने के लिए कभी-कभी देहातों में जाकर थोड़ी इधर की मिट्टी उधर ढोना, तालाब की सफाई करना, छोटा-मोटा रास्ता बनाना, इस प्रकार के कामों को उत्तर-बुनियादी तालीम प्राप्त किया हुआ युवक अर्थशून्य मानेगा। या तो आंतरिक प्रेरणा से वह ऐसे काम करेगा अथवा अपनी आजीविका प्राप्त करने के लिए वह खुद ही खेतीहर या करीगर का पेशा पसंद करेगा। लेकिन इस प्रकार के जीवन को कॉलेज में पढ़ा हुआ युवक, न पसंद करेगा और न उसमें उतनी योग्यता ही होती है। उत्तर बुनियादी शिक्षा प्राप्त युवक स्पर्धा की जगह सहयोग का स्थापन करना सीखेगा। वास्तव में स्पर्धा नहीं, परंतु सहयोग ही समाजधारणा की बुनियाद है। जीवन के सभी क्षेत्रों में इस सिद्धांत को ज्ञानतः और व्यवहारतः ग्रहण करने के लिए नयी तालीम की शिक्षा विद्यार्थी को तैयार करती है।

बुनियादी और उत्तर बुनियादी तालीम के जो वर्ग आज चल रहे हैं, उसके द्वारा ऐसे छात्र आज ही तैयार किये जा रहे हैं, ऐसा मेरा कहना नहीं है। लेकिन ऐसे छात्र निर्माण करना ही नयी तालीम की दृष्टि है, इतना ही मैं कहना चाहता हूं। अहिंसा के आधार पर समाज-निर्माण करने के लिए यह पहली आवश्यक चीज है।

जमीन तथा कृषि का विकास

खाद्य-पदार्थों के उत्पादन के लिए मनुष्य की सृजन-बुद्धि सबसे पहले भू-माता की ओर ही दौड़ती है। **मनुष्य-प्राणी धरातल पर अवतीर्ण हुआ उससे पहले धरातल को उसके बसने लायक बनने में लाखों साल बीत गये। पहाड़ों से एक इंच मिट्टी का स्तर बनने के लिए हजारों साल लग जाते हैं। प्रकृति लाखों साल काम करती रही और एक-एक इंच के हिसाब से उसने धरातल को खेती करने लायक बनाया, जिससे मनुष्य अन्न और फल पैदा कर सके। प्रकृति ने अपनी सहज गति से जमीन तैयार की, लेकिन उसके साथ-साथ उसको अधिक उपजाऊ और विकसित करने के लिए मानव-प्रयत्न के लिए भी मौका दिया। इसी से मनुष्य की सृजन-शक्ति और संरक्षण-शक्ति को गति मिली।** *...क्रमशः अगले अंक में*

(साभार : सर्वोदय, मार्च-अप्रैल, 1953, संपा. विनोबा, कार्य. संपा. दादा धर्माधिकारी)

गतिविधियां एवं समाचार

'गांधी जिला'

संपूर्ण क्रांति शिविर सम्पन्न : चम्पारण की बदहाली पर चिंता
चम्पारण को गांधी जिला और गया को जे. पी. जिला घोषित करने की मांग

11-12 अक्टूबर, 2014 को खादी भंडार, मुजफ्फरपुर (बिहार) में संपूर्ण क्रांति राष्ट्रीय मंच का शिविर सम्पन्न हुआ।

गत 3 वर्षों के सामूहिक प्रयत्नों से बड़ी संख्या में संपूर्ण क्रांति आंदोलन से जुड़े साथी खासकर बिहार, झारखंड के विभिन्न क्षेत्रों से सम्मेलन में आये। सम्मेलन में 150 पंजीकृत प्रतिनिधियों सहित प्रथम दिन लगभग 300 साथियों की उपस्थिति रही। अंतिम सत्र तक प्रमुख सभी साथी न केवल उपस्थित रहे, बल्कि गंभीर चर्चा में संलग्न रहे। शिविर में मुख्य रूप से निम्न मुद्दों पर चर्चा केन्द्रित रही, इनमें निम्नलिखित बिन्दुओं पर सर्वसम्मति हुई :

1. गंगा एवं अन्य नदियों के अविरल तथा निर्मल प्रवाह के लिए चलने वाले समानधर्मी आंदोलनों को समर्थन तथा यथासंभव सहभागिता। इस प्रयास में लगे सहभागियों के स्वागत एवं सहयोग की अपील। 2. सीलिंग की अधिशेष, भूदान भूमि, गैर मजरूआ मालिक भूमि, नदी के कटाव से पीड़ित तथाकथित विकास परियोजनाओं के कारण हुए विस्थापितों को मालिकाना तथा पुनर्वास के अधिकार तथा वास की भूमि के लिए संघर्षरत संगठनों को पूर्ण समर्थन व सहयोग। 3. गांधीजी की कर्मभूमि चम्पारण को गांधी तथा जे. पी. की कर्मभूमि, गया को जे. पी. जिला बनाने का प्रस्ताव पारित करते हुए बिहार सरकार तथा केन्द्र सरकार से इस संदर्भ में शीघ्र आवश्यक कार्रवाई करने का अनुरोध। 4. चम्पारण सत्याग्रह के शताब्दी वर्ष के अवसर पर गांधी के ग्राम स्वराज्य तथा जे. पी. के संपूर्ण क्रांति के विचारों को गांव-गांव पहुंचाने तथा किसानों, मजदूरों की हालत के अध्ययन के लिए 3 वर्ष का अभियान चलाना। 5. लोकतंत्र को मजबूत करने, इसे धन, कारपोरेट, जाति, धर्म एवं अपराधियों के शिकंजे से मुक्त करने, प्रतिनिधि वापसी के अधिकार सहित चुनाव सुधारों के लिए देश के सहमना संगठनों के सहयोग से अभियान का संचालन। 6. काम के अधिकार को 'मौलिक अधिकार' बनाये जाने तथा असंगठित मजदूरों का राष्ट्रव्यापी संगठन बनाने के लिए अभियान चलाना। 7. बड़े उद्योगों के आक्रमण को रोकने के लिए कुटीर उद्योगों में बनने वाली तमाम वस्तुओं को विशेष आरक्षण की मांग केन्द्र सरकार से करते हुए लघु एवं कुटीर उद्योगों के श्रमिकों को संगठित करना। 8. संपूर्ण क्रांति विचार का विश्लेषण, इससे नई पीढ़ी को स्पष्ट रूप से अवगत कराने तथा सम्बद्ध करने के लिए एक 'विचार समूह' (think tank) गठित करना। 9. उपभोक्तावाद, पितृसत्तात्मक, लैंगिक एवं सामाजिक असमानता, महिला उत्पीड़न के विरुद्ध चलाये जा रहे अभियानों को सक्रिय सहयोग। 10. खादीग्राम (बिहार) तथा देश के अन्य संस्थानों में जे. पी. विद्यापीठ की स्थापना के लिए प्रयत्न करना। 11. संपूर्ण क्रांति विचारधारा को आगे बढ़ाने में लगे कार्यकर्ताओं के लिए 'राष्ट्रीय कार्यकर्ता सहायता कोष' का निर्माण करना। 12. देश की धर्मनिरपेक्षता की रक्षा के लिए साम्प्रदायिकता के विरुद्ध देशभर में चल रहे शांतिमय अभियानों को पूर्ण समर्थन।

मंच का अगला सम्मेलन 18-19 मार्च, 2015 को दरियागंज, मुंगेर में रखने का निर्णय हुआ है। **–भवानी शंकर कुसुम**

पटना एयरपोर्ट के नाम में 'लोकनायक' जोड़ने की मांग

सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष भाई महादेव विद्रोही ने पटना एयरपोर्ट के नाम में जेपी के नाम के पहले 'लोकनायक' शब्द का इस्तेमाल न किए जाने पर खेद व्यक्त करते हुए भारतीय वायुयान प्राधिकरण को पत्र लिखकर अविलंब पटना एयरपोर्ट का नाम जयप्रकाश एयरपोर्ट के बदले 'लोकनायक जयप्रकाश एयरपोर्ट' करने की मांग की है। उन्होंने बिहार सरकार को भी इस दिशा में पहल करने का अनुरोध किया है। इसी तरह पूर्व में उन्होंने गया को 'जेपी जिला' घोषित करने की भी मांग सरकार से की है। **–का. संपा.**

महिला विचार बैठक

12-13-14 नवंबर, 2014 को सर्व सेवा संघ, महादेव भाई भवन, सेवाग्राम में महिलाओं की विचार-बैठक सम्पन्न हुई, जिसमें असम, केरल और महाराष्ट्र प्रदेश की 27 महिलाओं ने सहभाग लिया।

'गांधी का आर्थिक विचार, विकल्प और स्वावलंबन' विषय पर प्रश्नोत्तरी रूप में चर्चा हुई। सर्व सेवा संघ के प्रबंधक ट्रस्टी भाई टीआरएन प्रभु ने मार्गदर्शन किया।

'जनतंत्र लोकशाही नागरिकत्व' विषय पर संवाद रूप में चर्चा हुई। सर्व सेवा संघ की मंत्री शोभा शिराढोणकर ने विषय का प्रतिपादन किया। सर्वोदयी महिलाएं नागरिकत्व निभाते हुए लोकनीति, लोकशक्ति-निर्माण के कार्यक्रम की तलाश की गयी। मतदाता के साथ ही लोकशक्ति-निर्माण की आवश्यकता महसूस हुई।

'सर्वोदय की वैचारिक भूमिका एवं कार्य' की जानकारी संवाद चर्चा में महिलाओं को हुई। चर्चा का मार्गदर्शन जीवीवीएसडीएस प्रसाद ने किया। सर्वोदय कार्य में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने, उनके लिए कार्यक्षेत्र चुनकर कार्य की खोज करने पर बल दिया गया, ताकि वे संगठन को मजबूती प्रदान करें।

'सर्व सेवा संघ की वैचारिक भूमिका एवं कार्य' को भाई महादेव विद्रोही ने समग्र रूप बताया और कहा कि महिलाओं को सक्षम बनकर सर्वोदय कार्य में लगे रहने की जरूरत है। 'गांधीजी के परिप्रेक्ष्य में महिला शक्ति' विषय पर संवाद चर्चा हुई। भाई चंदनपाल ने सर्वोदयी परिप्रेक्ष्य में महिला सक्षमीकरण का विवेचन किया। अहिंसात्मक तत्त्व व शांति के मार्ग से विवाद सुलझ जाते हैं, जिससे समाज सक्षम और सशक्त बनता है। महिला सक्षमीकरण कैसे हो, खुली चर्चा के उपरांत सर्वोदय संगठन और संगठनात्मक ढांचा विषय पर भाई विजय कुमार के साथ चर्चा हुई।

'व्यवस्थापन और गांधीजी' विषय पर संवाद चर्चा करते हुए डॉ. सुगन बरंठ ने बताया कि व्यवस्थापन और समय का नियोजन से कार्यकर्ता सक्षम व संगठन मजबूत बनता है। सूक्ष्म आंदोलन और शांतिमय संपूर्ण क्रांति कार्यक्रम की खोज से संगठन मजबूत बनाने का संकल्प लिया गया।

समापन सत्र में सुश्री राधाबहन ने सर्वोदय परिवार में जीवन-शिक्षण, नई तालीम, सक्षम नागरिकत्व सहित कई बिन्दुओं पर अपनी बात रखते हुए लक्ष्मी आश्रम, नई तालीम शिक्षा और आंदोलन की बात कही। उदाहरण देते हुए उन्होंने बताया कि महिला सक्षम बनकर नागरिक की भूमिका बहुत अच्छी निभाती है। 'मेरी पहाड़ियों की ठंडी-ठंडी हवा' गीत से सत्र समाप्त हुआ। अगली विचार बैठक 20 से 22 फरवरी, 15 में होगी। **–शोभा शिराढोणकर**

और अन्ततः – 1 दिसंबर : दादा धर्माधिकारी पुण्य-तिथि पर श्रद्धांजलि

सवर्ण के हाथ में झाड़ू और अछूत के हाथ में वेद हो

'दादा धर्माधिकारी' से 'धर्मयुग' के लिए 'अशोक मोती' की बातचीत

छात्र युवा संघर्ष वाहिनी को दादा का संदेश

दादा धर्माधिकारी ऐसे प्रसिद्ध गांधीवादी विचारक एवं चिन्तक हैं, जिनकी स्पष्टवादिता एवं बोलने की शैली से भारतीय युवा पीढ़ी सदा आकर्षित होती रही है। वैसे देश में अस्पृश्यता एवं पिछड़ी जातियों के आरक्षण के सवाल पर देश के बड़े-बड़े विचारकों ने अपने मत प्रकट किये हैं, परंतु दादा ने कुछ बुनियादी बातें स्पष्ट की हैं।

दादा कहते हैं—पिछड़ी जातियों की अयोग्यता पुराने लोगों ने जन्म के आधार पर मानी। ये कोई वर्ग नहीं है, चाहे *मार्क्स* या *गांधी* ने इन्हें कितना भी याद क्यों न किया हो। इन लोगों ने परिस्थिति को बदलने में मनुष्यों को मिलाने की कोशिश की। पुराने शौचालय रद्द हुए, फ्लश का जमाना आया, परंतु *ब्राह्मण* और *भंगी* में नजदीकता नहीं आयी। भंगी चाहे कितना भी अमीर क्यों न हो जाये, कोई ब्राह्मण शादी नहीं करेगा उससे। भोजन में भी शामिल नहीं करेगा उसे। आर्थिक स्तर बढ़ने से मात्र तीव्रता बढ़ेगी, फासले नहीं मिटेंगे। इसलिए पिछड़ी जातियों के आरक्षण में आर्थिक ही नहीं, सामाजिक स्तर की भी बात है।

गांधी एक नया आयाम लाये। *गांधी* ने कहा—मनुष्य-मनुष्य के नजदीक आये। *सवर्ण के हाथ में झाड़ू और अछूत के हाथ में वेद।* इसमें स्टेजेज होंगे पर सारे साथ-साथ चलेंगे। वे अछूत हैं। अतः उन्हें विशेष अधिकार मिलना चाहिए। इनके आर्थिक स्तर पर बिलकुल विचार नहीं करना चाहिए।

अ. मो. : हम तो शिक्षा में परिवर्तन चाहते हैं?

दादा : शिक्षा में क्रांति करने वालों को इस शिक्षा का बहिष्कार करना चाहिए। जो शिक्षा पद्धति में मात्र सुधार चाहते हैं, वे सिर्फ अपना स्थान बनाना चाहते हैं। अंग्रेजों से पहले इनको कभी शिक्षण नहीं मिला। क्या आप चाहते हैं कि भंगी-भंगी बना रहे? क्या इसी दिशा में शिक्षण ले जाना चाहते हैं? कितने वर्षों तक लोगों ने इन्हें धर्म और ईश्वर को 'डिक्टेटर' बनाकर इन्हें गुलाम बनाया। भला ऐसा भी ईश्वर (पिता) होगा, जो जन्म से ही आदमी (पुत्र) को गुलाम बना देगा? क्रांति के बाद जिसकी सत्ता होगी, उसकी कुछ संस्कृति होगी न? यह इनको समझाने की आवश्यकता है। अतः इनके लिए जो आरक्षण हो रहे हैं, उसका मैं विरोध नहीं करता।

अ. मो. : तो फिर उच्च वर्ग के लोगों का क्या होगा?

दादा : यही होगा न कि उन्हें नौकरी नहीं मिलेगी। तो क्या हुआ? क्या इस समाज को सरकारी नौकरों का समाज बनाना चाहते हैं? मैं तो चाहता हूं कि सरकारी नौकरों का परिमाण कम-से-कम हो। पारकिंसन का नियम है—'अधिक आदमी, कम काम' लोग बारी-बारी से राजा हो जायें, यह विकल्प नहीं है। अतः ऊपर की जातियों को सरकारी नौकरी का बहिष्कार कर देना चाहिए। अनेक राज्यों में ब्राह्मण राजनीति में नहीं के बराबर हैं। आरक्षण के कारण जिसके हाथ सत्ता जायेगी, उसके हाथ में राजनीतिक शक्ति नहीं रहेगी। अपनी इच्छा के त्याग से शक्ति आती है। जबरदस्ती से दब जाती है। उच्च वर्ग के लोगों में से पुरानी नहीं तो नयी पीढ़ी के लोग सोचें कि वे सरकार के नौकर न हों। हां, उच्च वर्गों में भी जिनकी आर्थिक स्थिति खराब है, उन्हें सुविधाएं दी जायें।

आज जो लड़ाई है, वह पिछड़ी जातियों में भी दो शिक्षितों (एलीट्स) की है। संपन्न लोगों के बीच की है। अछूतों के लड़के स्कूल-कॉलेज में जाकर फिर अपने घर के वातावरण में नहीं रहना चाहते। इसमें डर है कि कहीं ये सभी शिक्षित (एलीट्स) आपस में मिल न जायें और आम पिछड़े लोग पिछड़े ही न रह जायें। स्वतंत्रता की आकांक्षा सुप्त है इनमें। इसे जगाना क्रांतिकारियों का काम है।

संगठित धर्म को समाप्त करना चाहिए। ईश्वर इस संगठित धर्म का मुखिया है। कृपया ईश्वर को संस्थागत नहीं बनाया जाये। मानवता विज्ञान से ऊपर है। नहीं तो विज्ञान मानवता को खा जायेगा। संप्रदाय का निराकरण होना चाहिए। आजादी का युद्ध हुआ था, क्रांति नहीं हुई थी। अभी आप (छात्र युवा संघर्ष वाहिनी) क्रांति की बात करते हैं। संपूर्ण क्रांति की बात करते हैं। सिर्फ यह मत सोचिए कि उच्च वर्ग का क्या होगा, बल्कि यह सोचिए कि अगर इन अछूतों के लिए कुछ नहीं किया गया, तो इनकी स्थिति और कितनी खराब होगी।

अ. मो. : हम जो समाज में काम करते हैं, उसमें प्रशासन से सीधा संघर्ष होता है। सरकार का रुख भी अपने साथ नहीं है। हम क्या करें?

दादा : प्रतिदिन की समस्याओं का उत्तर नहीं है। बुनियादी प्रश्न यह है कि क्या अब सरकार बदलने से क्रांति होगी? जनता पार्टी मान लीजिए तंग आ गयी। डर कर या किसी तरह राज छोड़ देती है, तो क्या करेंगे हम? पार्टी की सरकारें तो बदलती रहीं और केवल राज्य-परिवर्तन की हद आ गयी। सत्ता-परिवर्तन से ही काम नहीं होगा, चूंकि आज सवाल सत्ता बदलने का नहीं, समाज बदलने का है। जहां शक्ति चाहिए, वहां वह शक्ति कैसे जागे यह सोचें। जब तक जनशक्ति जागेगी नहीं, लोकशक्ति खड़ी नहीं हो सकती। सच्चाई तो यह है कि प्रजातंत्र में अभी तक हमने अंतिम आदमी तक 'एप्रोच' नहीं किया। न ही सच्ची राजनीति की तरफ ध्यान ही है लोगों का। इसी से 'प्रेशर ग्रुप' बनते हैं, जो अपने स्वार्थों को ही देखते हैं। इससे क्रांति नहीं होती। आज सामाजिक शक्ति जनशक्ति को बढ़ने नहीं देती। आज समाज में वोट खरीदने वालों से लड़ना आसान नहीं है। *सरकार की गोली से जो मरेंगे, वे शहीद होंगे, लेकिन गलत वोट डालने से रोकने में जो मरेंगे, वे शहीद नहीं हुए, यही मान्यता है आज की।* अभी सरकार से लड़ाई की आवश्यकता नहीं है। संघर्ष के लिए संघर्ष नहीं हो, बल्कि जहां संघर्ष की आवश्यकता हो, वहीं संघर्ष किये जायें। इतना ध्यान रहे कि सरकार बदलने से ही क्रांति नहीं होगी। इधर इंदिराजी का भाव बढ़ रहा है। वे अगर गद्दी पर बैठीं, तुम उल्लू बन जाओगे।

(धर्मयुग, 13 अगस्त, 1978) ❑

महिला विचार बैठक

तीन कविताएं

गांधी

❑ प्रेमचंद प्रसाद

गांधी के रूप से फिर श्री कृष्णचन्द्र आया।
भारत पवित्र भूमि पै चरखे को आ चलाया।।

नव नीति को बतला, गीता पुनीत रचकर।
आनन्दमय अहिंसा व्रत एक अब बनाया।।

एक चक्र तब उठाकर भारत फतह किया था।
सौ धार चक्र चरखा अब फिर समर में आया।।

तब कंस को छकाया गोरस का दान लेकर।
अब रामराज पे अड़कर समराज्य को कँपाया।।

तब धर्म को बचाया पांडव के पक्ष में हो।
अब शांति का पुजारी बन भ्रांत को भगाया।।

जेहल में जन्म लेकर गोविन्द तब बना था।
हो बार-बार बंदी गांधी जी अब कहाया। ❑

(बिहार राज्य अभिलेखागार संचिका सं. 40 वि. 279/1931, प्रतिबंधित साहित्य)

तू है खुदा मर्जी तेरी

❑ ध्रुव गुप्त

बाहर रह या घर में रह
रेत-रेत मंजर में रह

तू है खुदा मर्जी तेरी
कंकड़ में पत्थर में रह

चेहरे पर पानी लेकर
चांद मेरे बंजर में रह

हद से बाहर पाँव न दे
अपनी ही चादर में रह!

आजादी है मुझे साँप से खेल की

❑ भवानी प्रसाद मिश्र

साँप रबर का ले आये बाजार से
थमा दिया पापा ने हमको प्यार से!
साँप सरीखा रंग, चाल भी लहर-लहर
मगर नहीं है जान, नहीं कोई जहर
खेल ठीक चलता रहता है डर नहीं
कोई नहीं टोकता ऐसा कर नहीं
क्योंकि साँप तो आया है बाजार से
और थमाया है पापा ने हमें प्यार से
आजादी है मुझे साँप से खेल की
उससे चाहे जितना हेलमेल की
साँप रबर का क्या कर सकता है भला
उलटा-सीधा जैसा चाहूं ले चला।
क्योंकि रबर का है आया बाजार से
मुझे थमाया है पापा ने प्यार से
एक तरह से मैं नेता हूं बेखबर
क्योंकि लचीले लोग ठीक जैसे रबर
आजादी का खेल चला करता है निडर
जान नहीं लोगों में, गायब है जहर
क्या आजादी है आयी बाजार से
थमा दी गयी है हमको वह प्यार से
लोगों को लोगों ने कर डाला रबर
और खेलते रहते हैं उनसे निडर
नहीं जान का नाम, नदारद है जहर
क्योंकि लचीले लोग ठीक जैसे रबर
आजादी भी आयी है बाजार से
किसी पापा ने हमें थमा दी प्यार से ❑

सर्व सेवा संघ (स्वत्वाधिकारी) के लिए महामंत्री, शेख हुसैन द्वारा सर्व सेवा संघ परिसर, राजघाट, वाराणसी (उ.प्र.) 221001 से प्रकाशित तथा सुरभि प्रिन्टर्स, इंडियन प्रेस कॉलोनी, मलदहिया वाराणसी से मुद्रित। संपादक : बिमल कुमार, कार्य.संपादक : अशोक मोती। छपी प्रतियाँ : 1500